उमंग

●

मेघराज 'मुकुल' एम. ए., साहित्यरत्न

दत्त ब्रदर्स, अजमेर

रचयिता—

मेघराज वर्मा "मुकुल" एम० ए०, साहित्यरत्न

भेंट

अरुणा बहन,

ये कविताएं छपवाने का अधिक श्रेय तुम्हें ही है।
न तुम मुझे परेशान करती, और न मैं इतना
परिश्रम करता। खैर, यह आग्रह है बड़ा मधुर
और प्रेरणादायक! कम से कम मैंने जीवन-
पथ पर एक नया मोड़ तो लिया!
अतः यह पुस्तक तुम्हें ही
सस्नेह समर्पित है।

भैया—
मुकुल

तारतम्य

क्रम-सख्या	कविता	रचना-काल	पृष्ठ
१.	पथ-सन्धान	(१९५३)	१
२	साम-गान	(१९४७)	४
३	भारत-वन्दना	(१९५२)	५
४	धरती और मानव	(१९५२)	७
५	जय-जनता	(१९४७)	९
६	युग-पुरुष	(१९४८)	११
७	नई धरा-नया आकाश	(१९५३)	१३
८	ध्रुव-तारा	(१९५४)	१५
९	जीवन-बसन्त	(१९५२)	१६
१०	प्यासी मिट्टी का गीत	(१९५३)	१७
११	गीतो का ज्वार	(१९५३)	१९
१२	क्रान्ति और निर्माण	(१९५२)	२१
१३	जिन्दगी	(१९४८)	२३
१४	युग-सत्य	(१९५४)	२४
१५	नया इन्सान	(१९५२)	२५
१६	पथराई पलके	(१९४६)	२७
१७	चुनौती	(१९५३)	३३
१८	सप्राण-सामाजिकता	(१९५२)	३४
१९.	जहाँ ज्वाला थर्राती है	(१९४९)	३६
२०	सुनहरी भोर	(१९५३)	३८
२१	जन-जीवन	(१९५३)	३९
२२	मजिल	(१९४८)	४१
२३	सन्नाटे की घाते	(१९५०)	४३
२४.	नई कोपल	(१९५१)	४४
२५	अन्धकार भागता है	(१९५४)	४६
२६	सघर्ष	(१९५४)	४९
२७	मेरे गीत	(१९५२)	५१
२८	पाषाण चेतना	(१९४९)	५२
२९	अपराजेय	(१९५४)	५३

क्रम-संख्या	कविता	रचना-काल	पृष्ठ
३०	नई-जिन्दगी नये रास्ते	(१९५२)	५५
३१	अम्बर-चुम्बी गीत	(१९५२)	५७
३२	धरती का श्रृङ्गार	(१९५४)	५९
३३	जन-मन जाग रहा है	(१९५३)	६१
३४	तेरी याद	(१९४५)	६४
३५	प्रश्न-उत्तर	(१९५३)	६५
३६	आधी दुनियाँ	(१९५३)	६७
३७	उर्वर धरा की कविता	(१९५३)	७३
३८	न्याय की आँख	(१९५४)	७७
३९	मेघ आया	(१९५२)	८१
४०	एशिया बनाम भारत	(१९५०)	८३
४१	सघर्षों का आह्वान	(१९५०)	८५
४२.	घुटन	(१९५०)	८७
४३	नई चेतना	(१९५१)	८९
४४	स्वतन्त्रता का मूल्य	(१९४८)	९३
४५	सैनाणी	(१९४४)	९६
४६.	हिरौल	(१९४४)	९९
४७	आण री बात	(१९४५)	१०२
४८	कोडमदे	(१९४५)	१०४
४९.	धरती री लाज	(१९५१)	१०८
५०	लोरी	(१९५१)	११२
५१	धरती री पहली बेटी	(१९५३)	११६
५२	मजदूर किसान रो गीत	(१९५४)	१२१
५३	भूदान	(१९५२)	१२३
५४	धरती रो सिणगार	(१९५४)	१२७
५५	बताओ अै कुण ?	(१९४१)	१२९
५६	राजस्थानी कविताओ का परिचय		१३१
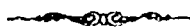
शुद्धि-पत्र

पृष्ठ-संख्या	पंक्ति-संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
१	२	में	मैं
४	११	वाण्य	वाच्य
६	११	साधना	साधन
६	१२	समज्ज्वल	समुज्वल
७	११	श्रृङ्गो	शृंगो
१०	२	हिमाद्रि धारा	हिमाद्रि प्यारा
११	५	प्रियमाण	म्रियमाण
१२	६	निराश	विनाश
१४	७	फस कर	घिर कर
१५	२	ध्रुवतारा	ध्रुवतारा
१५	१२	छबि	छवि
१६	१५	यह	यही
१७	११	विषय	विषम
१७	१२	उघाड़ेगा	उघाड़ेगा
१८	४	नीद	नींद
१९	१	ज्वाला मुखी	ज्वालामुखी
२६	३	में	मैं
३२	२	नील कंठ	नील कण्ठ
३५	५	छत्र छाया	छत्र-छाया
३८	३	स्वप्न में	स्वप्न में ही
३८	६	शास्त्रागार	शस्त्रागार
३८	७	हैं	है
४१	१४	घन	घन
४४	३	रस्मित	रक्तिम
४५	२	भोहैं	भौंहें
४५	३	सट गए	सट गये हैं
४५	३	छल	छन

पृष्ठ-संख्या	पंक्ति-संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
४६	१२	अंधपति	अंधमति
४७	८	काम	श्रम
४७	८	पुष्प	पुण्य
५०	२	आन	आज
५०	११	शुन्य	शून्य
५४	१	जब	है
५६	८	आबाद है	आबाद हूँ
५६	७	हं	है
६४	१०	गाथाएँ	गाथाएं
६४	६	स्वशासन	सुशासन
६५	८	खोलती	खौलती
६६	१३	आवज	आवाज
६८	१६	मानव	मानव का
७४	८	श्रंगार	शृंगार
८४	१७	तार-तार	तार-तार पर
६१	३	उनके	उसके
६६	१	हथलेवै रो	हथळेवै रो
६६	१	हिंगलू	हिंगळू
१०४	१५	हलवां हलवां	हळवां हळवां
११६	११	घाप	घाव
११६	६	बावलो	बावळो
१२०	१	रुल	रुळ

पहले मेरी बात सुनिए

कविता की सफाई में भूमिका बांधना कोई अच्छी बात नही है। कविता तो स्वय बोलती है, दूसरो को राह दिखाती है, फिर पाठको को कविता पढने से पूर्व ही राह दिखाने की क्या आवश्यकता है? विद्वान् आलोचक वैसे भी इन कविताओ का अध्ययन और मनन कर कुछ न कुछ कहेगे ही। लेकिन अविश्वास और पूर्वग्रह तथा एकागी मतवाद से बँधी इस दुनियाँ में चुप रहना भी बडा कठिन है, क्योकि ऐसा करना भी कही अनर्थकारी न हो जाए, इसीलिए इस उपक्रम का निर्वाह-मात्र कर रहा हूँ।

मेरा यह काव्य-सग्रह कविता लिखने का प्रथम प्रयास तो बिल्कुल नही है। हाँ, संग्रह एक प्रकार से प्रथम ही है और इसमें सकलित कविताए भी मेरे निकटवर्ती मित्रो की पसद और उनके आग्रह से छप रही है। एक आध कविता असावधानी से भी सम्मिलित करली गई है। मै चाहता था, दो-चार वर्ष और कडी मेहनत करके, गभीर अध्ययन द्वारा हिन्दी-जगत को कुछ ठोस वस्तु देता, किन्तु कह दिया ना, मेरा चुप रहना भी अनेक पाठको और साहित्यकारो को खलता था, अत· मेरी विवशता और मेरी उत्सुकता दोनो का ही समन्वय लेकर यह सग्रह प्रस्तुत है।

मै समझता हूँ, कविता लिखना कोई हँसी-ठट्टा नही है। दुर्भाग्यवश आजकल ऐसा ही समझा जाता है और विशेषकर अच्छे-भले लोगो की काव्य-रुचि को इतना अधिक विकृत देखकर तो और भी आश्चर्य होता है। आज का कवि भी अनेक प्रकार के बाह्य-प्रभावो में घिरकर कुठित हुआ जा रहा है। उसे अपनी सस्कृति से कम मोह है, और अपनी समझ के अनुसार कथित गंभीर अध्ययन के चक्कर में वह अनेक विरोधी मोर्चो पर बैठा, एक प्रकार से आत्म-हत्या ही कर रहा है। मुझे भय है, यदि हमारे काव्य-साहित्य में और अधिक ऐसा होता रहा तो बहुत शीघ्र कविता नाम की वस्तु को सूखा लग जाएगा और हमारा पाठक तो आज से और भी अधिक उदासीन होकर हमसे मुँह मोड लेगा। लेकिन यही तक सोचकर चुप रहना भी तो उचित नही और इसीलिए एक नई भाव-चेतना को लेकर मैंने यह सग्रह निकालने का दुस्साहस किया है। मेरे पास जीवन-सत्य की जो भी गभीर मार्मिक अनुभूति है, उसी को जाग्रत करके मैंने प्रत्येक पक्ति में एक नया अनुराग

उत्पन्न करने का प्रयास किया है। जीवन के प्रति एक नई उमङ्ग और निष्ठा ने मुझे मनुष्य-हृदय की मूल्यतम निधि को संजोकर रखने की प्रेरणा दी है। राष्ट्र के नव सृजन में जो भी स्वस्थ है, उसका दर्शन अनेक कविताओ में किया जा सकता है; लेकिन अस्वस्थ परंपराओ को भी किसी भय से अभिभूत होकर ढँक कर नहीं छोड़ा है।

युग बड़ी तेजी से वदल रहा है और उसके साथ जीवन के मूल्य भी बदल रहे है। नये जीवन-सौन्दर्य में मानव-मूल्यो का किस भाव-सवेदना से संबध रहेगा और जन-जीवन में कौन से जागरण की अधिक सचेष्ट सगति रहेगी, यह कहना अभी असभव नहीं तो कठिन अवश्य है। लेकिन किसी भी युग मे मानवोचित आदर्श और उदात्त नैतिक भावनाएं नही वदला करतीं। कवि यदि इन्हीं तत्त्वो के प्रति मनुष्य हृदय में नई आस्था उत्पन्न कर सकता है तो उसे झूठे काव्य-दर्शन की आड़ लेकर दंभी और धूर्त वनने की आवश्यकता नही। सच्चा कवि मानव-मात्र की प्रगति चाहता है, क्यो कि वह अपने युग का ही प्रतिनिधि नहीं, सम्पूर्ण सृष्टि और समस्त कालो का सदेश वाहक है, और उसकी साधना जन-जन के जीवन की प्रत्येक धड़कन के साथ आत्मीयता जोड़ती है।

जहाँ तक मेरे व्यक्तिगत जीवन-क्रम का सबंध है, उस विषय में इतना ही मै कह सकता हूँ कि मैने अपने थोड़े से जीवन-काल में, एक सामती-प्रदेश में रहने के कारण, अनेक परिवर्तन देखे है। रूसार की ऐतिहासिक उथल-पुथल में जो क्रातिकारी परिवर्तन बहुत पहले हो चुके थे, उनके समय क्रम को देखते हुए राजस्थान के सामंती दुर्गों में नये उत्थान का शख बहुत देरी से बजा। कुछ ही क्षणो का सा दृश्य दिखाई देता है, जब कि स्वर्गीय पटेल के लौह-प्रयास के फलस्वरूप देखते-देखते यहॉ की जनता सामन्त-प्रथा की क्रूर शृंखलाओ से चिर-मुक्त हो गई। पूजीवाद की सामाजिक उत्पादन-प्रणाली के अनुसार अब भी यहाँ की संस्कृति रुक-रुक कर सांस ले रही है। समाज की उत्पादक-शक्ति की वृद्धि के अनुरूप वितरण अव भी उतना ही विषम है क्योकि अधिकाश उत्पादन शक्तियाँ इस गौरव शाली प्रान्त की रक्त-पीऊ जोकों के हाथो में है और यहॉ की सस्कृति भी अव तक राजनीति की चक्करदार भूल-भुलैया में घिरी उसी वीभत्स पूँजीवाद की देन है। लेकिन धीरे-धीरे इस व्यवस्था का अंत भी हो रहा है और नव जन-संस्कृति के साधनो की खोज में यहाँ के कवि और लेखक एक नई आस्था लेकर वड़ी तीव्र गति से आगे वढ़ रहे है। उनकी उदात्त नैतिक

भावनाएं, जो मनुष्य-मात्र की प्रगतिशील आकाक्षाओ का प्रतिनिधित्व कर रही है, अवश्य ही एक दिन रंग लाएंगी ।

कहना नही होगा, मेरी इन कविताओ में इन शीघ्र परिवर्तनकारी अवस्थाओ का एक बड़ा आश्चर्यजनक अनमिल मेल है । जैसा कि ऊपर बता चुका हूँ, मै इन अवस्थाओ से बच भी नहीं सकता था, और अब यदि ऐसा कहूँ कि मेरी कविताओ में वह वैयक्तिकता, वह उलझन, वह कुठा और सामती अवशेषो के प्रति एक अनजाना मोह नहीं रहा है, तो सचमुच वह एक बहुत बड़ी आत्म-प्रवंचना होगी । कुछ कारण-वश मैने ऐसी कविताओ को इस संग्रह में स्थान भी दिया है, और वह केवल इसलिए कि मेरे परिवर्तनशील लेखन-क्रम की कडियाँ स्थान-स्थान पर जुड़ी हुई मुझे मेरे भविष्य की ओर स्पष्ट संकेत करती रहें । बहुत चाहता था कि मै अपने रचना-क्रम के अनुसार प्रत्येक कविता के साथ तिथियाँ भी लगा देता किन्तु प्रकाशकीय कठिनाइयाँ और पुस्तक को शीघ्र छपाने की भावना ने इस दोष का परिष्कार नही किया ।

जहाँ तक मेरी कविताओ के भविष्य का संबध है, मै उनकी प्रगति के विषय में बिल्कुल सदिग्ध नहीं हूँ । अनेक तूफानो के आने पर भी मेरी अनवरत टक्करो में हतोत्साहित होने का भाव कभी नहीं आया । प्रत्येक पराजय ने मुझे नये प्राण और नई शक्ति दी है, और अब भी जहाँ तक वश चलता है, हृदय और मस्तिष्क से सचालित प्रत्येक शब्द में नया अर्थ और नये भाव से सचालित रस-सौंदर्य की प्रतिष्ठा करने के लिये मै सर्वदा आतुर रहता हूँ । मेरी काव्य-साधना प्रत्येक क्षण, युग की करुण-विदारक वेदना को उत्कृष्ट कलात्मक अभिव्यक्ति देने को तैयार है । काव्य-जगत् में प्रचालित अनेक प्रवादो के होते हुए भी, मै अस्वस्थ परम्पराओ और विकृतियो के प्रति सजग रहने का पूर्ण प्रयत्न करता आया हूँ। एकांगी बौद्धिक मान्यताओ का न कभी मै समर्थक रहा हूँ और न रहूँगा । एकांगी मतवादो ने हमारे काव्य-कोष में बड़ी भारी शुष्कता उत्पन्न कर दी है और यही कारण है कि पिछले वर्षों में अधिकाश कविताए रूखी, दुरूह और गद्यमात्र ही रह गई है । उनमें न अनुभूति है, न कलाभिरुचि का सम्यक संस्कार ही । अतिशय दुरूहता और अतिशय सस्ती सरलता ने आपसी होड में साहित्य को बड़ी हानि पहुँचाई है, सहज भावगम्यता और रुचि-परिष्कार की ओर बहुत कम बढा जा रहा है । नये युगीन-उत्थान की प्रेरणादायिनी

शक्तियाँ साहित्य में वर्तमान हैं किन्तु किसी उदात्त लक्ष्य की ओर कदम नही उठ रहे है । प्रगति के नाम पर आपसी तू-तू मैं-मैं अधिक हैं और चारो ओर गुट-बदी और मोर्चा-बंदी तथा कुत्सित-प्रयोगो की भरमार है । मै यह विश्वास पूर्वक कह सकता हूँ कि अभी तक मै किसी भी खूटे से बधकर नही रहा हूँ । मेरी अपनी चेतना और मेरी परिस्थितियो ने मुझे राह दिखाई है और किसी भी पूर्व ग्रह से ग्रस्त होकर मैंने कभी भी कोई नारेबाजी की चीज नही लिखी है, और जो कुछ देखा है या समझा है, उसे प्रत्यक्ष रूप से निर्भीक होकर माँ-भारती के चरणो में अर्पित कर दिया है । दोष मेरी कविताओ में भी अनेक होगे और हैं भी, किन्तु मेरी ईमानदारी और अनवरत साधना के प्रति उँगली उठाने वालो से मै कभी भी आँख मिलाना पसद नही करता ।

देश में समाजवादी सस्कृति और व्यवस्था के स्वस्थ लक्षण दिखाई देने लगे है; यह हमारे लिये सौभाग्य की बात है । जिस परिस्थितियो में हम एक नई सस्कृति की काल्पनिक रूप-रेखा-मात्र खीचते थे, वही कल्पना आज नवीन क्राति और निर्माण का सगीत आलाप रही है । अत निकट भविष्य में पूँजीवादी सस्कृति की अंतिम साँस बंद होते ही, हमारे काव्य में एक नई शक्ति फिर आएगी ।

देश के विधान ने वर्गहीन समाज की सुदृढ़ नीव रखी है अब भविष्य के लिए हमारे साहित्य की स्वस्थ शक्तियाँ भी अनवरत परिश्रम में जुटी है । पीड़ित मानवता का साथी, आज का कवि, यदि कल तक विद्रोही आत्मा के स्वर को नही दबा सका था, तो अब समय के अनुकूल आने पर वह स्वस्थ प्रेम और प्रकृति-सौन्दर्य का भी पुजारी बनेगा । प्रेम और प्रकृति का मनुष्य-जीवन मे अक्षुण्य स्थान है, किन्तु इन्हें भी अब नई दृष्टि देनी होगी । कला का समाज से गहन संबध है और प्रत्येक नये परिवर्तन के साथ कविता की नई शक्ति पुरानी निर्जीव श्रृखलाओ को झकझोर कर रख देगी । हम नये सामाजिक सबधो की कल्पना ही नही कर रहे, उसको मूर्त रूप भी देने चले है । अतीत के स्वर्ण-स्वप्न हमे आवश्यकता से अधिक गुदगुदा चुके और हमारी कुठाओ से भरी प्रीति को अनेकानेक बार गोदी में लेकर सुलाते रहे है किन्तु जीवन का यह नया दर्शन योग-भोग की सडी-गली सस्कृति को ललकार रहा है । अभिजात-वर्ग की कला स्वयं पलायन कर चुकी है, और जीवित रहने की एक सबल आकाक्षा अतीत की प्रत्येक प्राण-स्पदन पैदा करने वाली शक्ति की ग्राहक होकर, आगे बढ़ने को पुलकायमान

हो रही है, अतः यह कविता-सग्रह भी इसी दृष्टि को लेकर आपके सामने आ रहा है।

भूमिका की औपचारिक बातें पूर्ण करने से पूर्व यदि मै अपने कविता-पाठ के सबध में भी थोडा कहदू तो वह अनुचित नही होगा। और वह इसलिये कि कविता और सगीत मेरे जन्म के साथी रहे है। जब में आठ-नौ वर्ष का ही था, मेरे पूज्य पिताजी रामायण का पाठ करते-करते आत्म-विभोर हो जाया करते थे और उनकी सुमधुर स्वर-लहरी में, आस-पास बैठे हम सभी इतने तन्मय हो जाते थे कि उस आनंद को आज भी शब्दो में व्यक्त करने में असमर्थ हूँ। मेरे कविता-पाठ में उनके रामायण-पाठ की अमीट छाया है। प्रत्येक रस की अर्थाभिव्यक्ति के लिये कितने परिमाण का स्वर और कैसी भाव-भागिमा की आवश्यकता होती है, और आदि से लेकर अत में चरम तक पहुँचने के लिये किस प्रकार का "कौशल" प्रयोजनीय है, यह आज भी उनसे सीखा जा सकता है। वास्तव में कविता लिखना यदि महान कला है तो उसको सवार कर उसका पाठ करना भी सहज नहीं है; वह भी अपने आप में एक स्वतत्र कला है जो बड़े-बड़े सुर-साधको के सुरीले कंठ भी शैली से अनभिज्ञ होने के कारण, वह प्रभाव पैदा करने में असमर्थ रहते है।

कम से कम मेरा अनुभव तो इस बात का साक्षी है कि हृदय के शुद्ध रक्त से लिखी हुई वीर-रस की एक कविता को पूरे मनोयोग से पढ़ लेने के पश्चात् एडी से लेकर-चोटी तक का पसीना बाहर बहकर समस्त प्राणो को स्फूर्तिमय कर देता है, और जिस सहज भाव, तल्लीनता और रोमाच की अवस्था में जन-समुद्र उसे हृदयगम करता है, उसे देखकर तो जन-कवि-सम्मेलनो में कोरी विद्वत्ता का प्रदर्शन और काव्य-कलाबाजी निरा पाप प्रतीत होते है। साधारण जनता में पठित कविता को काव्य की संकीर्ण और कुठित कसौटी पर कसना कवि के साथ और भी अन्याय है। वहाँ एक-दो विद्वानो के साथ रस और भावो के आदान-प्रदान की बात नहीं होती, बल्कि हजारो और लाखो तक सीधे पहुँचने का प्रश्न होता है। ऐसे जन-सम्मेलनो में साधारण से साधारण भाषा में बड़ी से बडी और बहुमूल्य अनुभूति को जनमत में उतारना ही कवि का लक्ष्य होना चाहिए। मार्टिनेनगो सिज़रेस्को (Martinengo-Ceseresco) ने लोकप्रिय कविता के विषय में कहा भी है—Populai poetry is the reflection of moments of strong Collective emotion लेकिन हमारे यहां ऐसा नहीं है।

दुर्भाग्यवश हमारे यहाँ तो कवि-सम्मेलनों की परम्परा बहुत ही बिगड़ चुकी है।

मैंने अपने कविता-पाठ को गत १३-१४ वर्षों से पूरी तल्लीनता के साथ कौशल प्रदान किया है, और इस कौशल में चार-चाँद लगाने का श्रेय मेरी प्रातः स्मरणीया जननी को है, जिन्होंने अपने प्रभावशाली व्यक्तितव के द्वारा हमेशा ही मुझे निरन्तर लिखने-पढने की प्रेरणा दी। बचपन में अपने सम्मुख बैठाकर जिस वात्सल्य पूर्ण-मुद्रा में वे मुझे देखती थीं, और मेरे रामायण-पाठ का आनद लेती थीं, उस छवि को मैं जीवन-पर्यन्त नही भूल सकता। सच पूछिये तो मुझे कवि बनाने का संपूर्ण श्रेय भी उन्ही को है।

विद्यार्थी जीवन में मैंने वाल्मीकीय रामायण के विषय में 'रघुवंश' में भी उसके गाये जाने का उल्लेख पढ़ा था —

"वृत्त रामस्य वाल्मीके कृतिस्तौ किन्नरस्वनौ।
कि तद्येन मनो हर्तुमल स्याता न शृण्वताम्॥"

अर्थात् वृत्त रामचद्र जी का था, कृति वाल्मीकि जी की थी और उसके गाने वाले किन्नर-कठ दोनो बालक थे, तो सुनने वालो के मन को हरने के लिए कौनसी बात पर्याप्त नही थीं ?

इसमें वृत्त, कवि और गायक-तीनो को महत्त्व दिया गया है। मैं भी कवि होने के साथ यदि अपनी कविताओ का गायक भी हूँ तो यह मेरे लिये लज्जास्पद नहीं बल्कि गर्व और सौभाग्य की बात है। मै अपने विद्यार्थी जीवन में १३-१४ वर्ष की आयु में कविता लिखने की रुचि प्राप्त कर रहा था तो उस समय "एडगर एलन पो" (Edgar Allan Poe) की इस महान् उक्ति के एक-एक शब्द को आत्मसात करके ही गुरुप्रसाद लिया था—

"Music when combined with a pleasurable idea, is poetry, music, without the idea, is simply music, the idea, without the music, is prose, from its very definiteness".

मुझे यह सब लिखने की आवश्यकता नहीं थी, फिर भी मेरी समस्त कविताओ का अध्ययन किये बिना, मेरी कुछ-एक शिशु-कालीन कविताओ जैसे 'सैनाणी' आदि की अपरिपक्वता किन्तु अतिशय लोकप्रियता को देखकर, कोई

ग़लत धारणा न बन जाए, इलीलिए मुझे यह थोडा नम्र-निवेदन करना पड़ा है, वैसे तो "सुभाषितम्" का यह श्लोक हमेशा ही मेरा धैर्य-रक्षक रहा है:—

आघ्रात परिलीढमुग्रनखरै क्षुण्णच यच्चर्वितम् ।
क्षिप्त यद्भुवि नीरसत्वकुपितेनेति व्यथा मा कृथा ।।
हे माणिक्य तवैतदेवकुशल यद्वानरेणाग्रहा—
दन्त सत्वनिरूपणाय सहासा चूर्णीकृत नाश्मना ।।

और यह मैं इसलिये कह रहा हूँ राजस्थानी कवियो के बाद हिन्दी के क्षेत्र में तामिल और तेलगू तक के महा प्रतिभा-सम्पन्न कवि भी शीघ्र ही राष्ट्र-भाषा की सेवा करने आरहे है और उनके प्रति तो और भी उदार होने की आवश्यकता होगी । और इस सबध में देश की मुख्य पत्र-पत्रिकाओ, रेडियो और दैनिक-समाचार-पत्रों को बहुत सजग रहने की आवश्यकता है, अन्यथा संकीर्ण दृष्टिकोण हिन्दी का बहुत बड़ा अहित कर देगा । और जहाँ तक मेरी अपनी रचनाओ का सबध है, वहाँ तो मैं अब कुछ नहीं कहना चाहता; केवल महाकवि भवभूति की इन पक्तियों को ही दोहरा देना पर्याप्त होगा —

ये नाम केचिदिह न प्रथयन्त्यवज्ञाम्,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्न ।
उत्पत्स्यते हि मम कोऽपि समान धर्मा,
कालो ह्यय निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ।।

बुजुर्गों ने कहा है, समझदार को इशारा ही काफी है; और यह 'उमङ्ग' ऐसे ही व्यक्तियो के आग्रह पर तो आज इतने समय बाद नये युग-सत्य को प्रत्यक्ष करने के लिये उठी है । संग्रह में सस्वर पढ़ने और केवल पाठनीय और अध्ययन करने योग्य दोनो प्रकार की कविताएँ है । खरे और निष्पक्ष आलोचको से आग्रह है कि वे सही आलोचना द्वारा मेरा मार्ग-प्रदर्शन करे ।

सग्रह के अतिम पृष्ठो में मैंने कुछ राजस्थानी कविताएँ भी दे दी है । हिन्दी-कविताओ के साथ यह प्रथम मेल है और इसका मुख्य कारण मेरे अनेकानेक पाठको का अनुरोध है । मुझे विश्वास है, मेरी राजस्थानी कविताएँ भी उतनी ही सजग सिद्ध होगी यद्यपि उनमें ठेठ सामन्ती और ठठ

प्रगतिशील दोनो प्रकार का मेल हो गया है ! राजस्थानी मातृभाषा होने के कारण जैसी सरल अभिव्यक्ति इन रचनाओ में हुई है, वैसी हिन्दी की रचनाओ में नही; यद्यपि हिन्दी की कविताओ की तुलना में मैंने राजस्थानी में उनका शतांश भी नही लिखा है। लेकिन इसका यह अर्थ कदापि नही लिया जाना चाहिए कि हिन्दी की रचनाए राजस्थानी रचनाओकी तुलना में कम महत्वपूर्ण बन पडी है। बल्कि सत्य तो यही है कि कॉलेज मे वर्षों के अध्ययन और अध्यापन के फलस्वरूप हिन्दी ही मेरे अधिक निकट रही है। दुर्भाग्यवश कभी-कभी हिन्दी और राजस्थानी लेखको का अलग-अलग विभाजन करते हुए देखा गया है, और मेरी समझ में ऐसी प्रवृति अत्यन्त खेदजनक है।

अत में पुस्तक की छपाई-सफाई को देखकर जितना संतोष है, उससे कही अधिक पूरे "प्रूफ" न देख सकने के कारण अनेक अशुद्धियो के लिये दुःख भी है। आशा है, पाठक और आलोचक साथ में लगे शुद्धिपत्र के अनुसार ही रचनाओ को सुधार कर पढेंगे। निश्चय ही, दूसरे सस्करण में ये त्रुटियाँ ढूँढने पर भी नही मिलेगी।

मेघराज 'मुकुल'

पथ-सन्धान

अर्थहीन, ध्वनिमात्र, और केवल सगीत नही हूँ ।
म सकेतो मे छिपकर, अब बेबस गीत नही हूँ ।।

बाह्य न दीखे, अन्तर झलके, यह है घोर पलायन ।
मैं प्रत्यक्ष प्रीत का यौवन, सघर्षो का गायन ।।
अन्तर्वृत्ति-निरूपक, मेरा दृष्टिकोण जब होता ।
व्यक्तिवाद तब मेरे भीतर, आँख मूदकर सोता ।।

किसका साहस है जो कहदे, मै युग-जीत नही हूँ ?
अर्थहीन, ध्वनिमात्र, और केवल सगीत नही हूँ ।।

उमङ्ग

शब्दो का चातुर्य न मुझसे, पल भर सन्धि करेगा।
अवचेतन जो भी है वह, चेतन से कब न डरेगा ?
मै विचार, वैचित्र्य नही हूँ, कविता से लिपटा हूँ।
बहुत सजग भावो की, अर्न्तज्योति लिये सिमटा हूँ ।।

आँखे मेरा पीछा करती, पर मै भीत नही हूँ।
अर्थहीन, ध्वनिमात्र, और केवल सगीत नही हूँ ।।

जीवन के विरुद्ध जो चलती, वह कविता कुलटा है।
कला नही उसकी सन्तति है, आराधन उलटा है ।।
शाश्वत और चिरन्तन का सुख, युगमति को हरता है।
बिना सीग का कवि-पशु, केवल हरी घास चरता है ।।

मै हूँ उष्ण रक्त की गर्जन, निष्क्रिय गीत नही हूँ।
अर्थहीन, ध्वनिमात्र, और केवल सगीत नही हूँ ।।

सामाजिक सम्बन्ध आज, केवल है मेरा नाता।
मै गाता हूँ, युग जब मेरे, साथ साथ है गाता ।।
मुझे भुजाओ के बन्धन मे, स्वीकारो या छोडो।
लेकिन मुझको व्यक्तिमात्र की, चाहो से मत जोडो ।।

पथ-सन्धान

आहों का अवकाश बाँध लू, मै वह प्रीत नही हूँ।
अर्थ हीन, ध्वनिमात्र और केवल सगीत नही हूँ ॥

मैं निर्बन्ध नही हूँ, बन्धन का मै भी बन्दी हूँ।
पर विकृति के विश्वासो का, सचमुच प्रतिद्वन्दी हूँ ॥
चाल ढाल मे अलबेला, पर सदा सभल चलता हूँ।
पीडाओ को देख हिमालय, सा मै भी गलता हूँ ॥

तुम कहदो, पाषाण निरा हूँ, पर नवनीत नही हूँ।
अर्थ हीन, ध्वनिमात्र और, केवल सगीत नही हूँ ॥

साम-गान

सोम स्वर मे वन्दना ले, पुण्य-भू का गीत लहरे ।

बीज फूटे, वायु सिहरे, वृष्टिका आह्वान माँगे ।
चरण की गति समय का, संघर्ष लेकर बढे आगे ।।
नित नये मस्तिष्क पनपे, सृष्टिका वरदान घहरे ।
सोम-स्वर मे वन्दना ले, पुण्य-भू का गीत लहरे ।।

पुलक सस्मिति, पलक पल-पल, वेदना का भार थामे ।
गर्व गौरव को सम्हाले, मुक्ति का वरदान लहरे ।।
चरण की गति समय का, सघर्ष लेकर बढे आगे ।
प्रगति-पथ के छोर पर, नित सृजन के मिल जॉय धागे ! ।

नीलिमा आकाश की, सागर तरगो पर उतर कर,
पूर्व दृष्टा नयन की, बन वाष्प सी छा जाय भू पर ।।
सभ्यता जागे उभर कर, भाग्य का नैराश्य धोकर ।
सजग पग, मग मे उठे, उठ कर कभी खाएँ न ठोकर ।।

भय नही विश्वास खोए, सुख न दुख अनुगमन ऑके ।
सरस अन्तर मे शिराएँ, वेदना ले फिर न झॉके ।।

भारत-वन्दना

श्रमजीवी जनता है, मेरी भारत-माता।
मेरा रक्त सर्वहारा की, विजय सुनाता ॥

लौह-एकता मजदूरो की, नई जवानी।
आज शिखर पर फिर से चढता, उतरा पानी ॥
घुटने टेक रहे है, निर्मम पूजीवादी।
हथकडे बेकार, मिट रहे अवसरवादी ॥

यह अटूट है शक्ति, जिसे बिजली पनपाती,
यह अटूट है राग, जो कि भैरव कहलाती ॥
पारंगत है आज प्रगति, रोके न रुकेगी,
कस कर बँधी कमान, सहज ही नही झुकेगी ॥

उमङ्ग

आज वर्ग-सघर्ष छिड गया, अकड गया श्रम।
पूजीवादी प्रतिक्रिया है, मॉज रही भ्रम ॥
मुँह पर लगा तमाचा देखो मेहनतकश का।
अब आन्दोलन नही रहा, दुश्मन के वश का ॥

जीर्ण-पुरातन-परम्परा से पल्ला छूटा।
आज व्योम का प्रथम बार ध्रुवतारा टूटा ॥
आज पैतरेबाज शत्रु का, भडा फूटा,
मानव ने सघर्षो से जीवन-रस लूटा ॥

तमोराशि के अन्तस्तल से ज्योति उठी रे,
अतिमानव से मानव को अब मुक्ति मिली रे ॥
साधना-सिद्धि कल्पना अब साकार हो रही।
आज समज्ज्वल देह श्रमिक की धार हो रही ॥

मेरुदण्ड भारत का अब मजदूर कहाता।
कदम बढाकर वही, महा-मानव है आता ॥
श्रम-जीवी जनता है मेरी भारत माता।
मेरा रक्त सर्वहारा की, विजय सुनाता ॥

धरती और मानव

परम व्योम मे स्थित है देखो, धरती माँ का हृदय महान ।
शुद्ध ज्ञान का स्रोत अमर यह, महा सत्य से आवृत स्थान ।।
मेघजाल उन्मुक्त वृष्टि ले, आता करने इसे प्रणाम ।
बिन प्रमाद, पौधो मे सिचकर, पानी बनता दूध ललाम ।।

सुरभित वृक्ष, वनस्पति, औपधि का रहस्यमय ले विज्ञान ।
वात बवडर चलते इसमे, लेकर अपना विद्युत गान ।।
मिट्टी जल निर्मित पृथ्वीमे, प्राणो की रहती जो शक्ति ।
रहता उसमे महा-रसायन, मानव की वह चिर अभिव्यक्ति ।।

स्थूल विश्व-रूपा पृथ्वी की, श्री-विभूति रमणीय अनूप ।
सिन्धु मेखला, गिरि-उष्णीष-अलकृत, नित यह पुष्कल रूप ।।
शृङ्गो पर नित शिलीभूत हिम, सरिताएँ, समतल मैदान ।
निर्झर की प्रिय रूप सम्पदा पर, होता बादल बलिदान ।।

उमङ्ग

जैसे माता अपने सुत को, लेकर अपनी पावन गोद ।
दुग्ध-विसर्जन करती स्तन से, पाकर मनमे प्रबल प्रमोद ।।
वैसे भू निज पयस्विनी धारा से पाले मनुज महान ।
माँ का पा वात्सल्य भाव वह बढे सुपथ पर ले युग-गान ।।

सस्कृति मे आलोक सत्य का निकला इससे ले इतिहास ।
जिसके पीछे चले धरासुत, जीने का ले मधुर प्रयास ।।
यह भौमिक चैतन्य न जाने, आज हुआ क्यो शीघ्र विलीन ।
समता की रेखा के नीचे तडप रहा है मानव दीन ।।

भूरी, काली, लाल रग की, मिट्टी उड उड रोके साँस ।
पशु बनकर मानव मानव का, निगल रहा है कच्चा माँस ।।
हिमगिरि के दुर्धर्ष गडशैलो को चीर न अब तू गग ।
आज न पाप धो सकेगी तू, ऐसा चढा हुआ है रग ।।

अथर्ववेदीय पृथ्वी सूक्त (यस्या हृदयं परमे व्योमन् सत्येनावृतमृतं पृथिव्याः) के आधार पर ।

जय जनता

जय जनता जय अमर भावना, जय गौरव गाथा ।
अन्नपूर्णा भुवन विजय-श्री, जय भारत माता ।।

इतिहासो की सृष्टि, सृष्टि की पुण्य पाण्डुलिपि माँ ।
शतरूपा मानव महतारी, जग-पूजित-प्रतिमा ।।
प्रतियोगिता, सभ्यता, सबला, सत-समष्टि सदया ।
वीर प्रसविनी सर्व-वर्ण-अम्बिके, विषद-विजया ।।

आती है तू षड्-दर्शन मे वेष समेटे माॅ ।
तेरे आॅगन मे ऋतुपति आ, गाता गुण-गरिमा ।।

ब्रह्मघोष से साध्य-प्रात, श्रवणों मे सुधा बहे ।
कोटिक चक्रवात हो खडित, भूतल स्वर्ग बने ।।
पवन-बाण पर बैठ बादली, उमड घुमड घिर आ ।
गतदल विकसित पात-पात पर, राग प्रभाती गा ।।

अंतस्सलिला, सुरसरि, यमुना, सिन्धु, ब्रह्मधारा ।
अकवार मे लिये खडा है, जय हिमाद्रि धारा ॥

निशि के तारो सी अगण्य तू, कैसे आज घटे ।
क्या उल्का से गगनाङ्गन की. आभा कभी लुटे ॥
तू अखड है किरण-ज्योतिसी, निशिदिन पल चमके ।
निरधि की नीलिमा, व्योम की निधि तुममे दमके ॥

वर्ग-वर्ण-प्रतिकूल, न्याय अनुकूल सर्ग-जाता ।
जय जनता, जय अमर भावना, जय गौरव गाथा ॥

प्राण यहाँ पर निखर निखर कर, धरती पर उभरे ।
पवन मिली साँसे गुनगुकर, फसलो पर उतरे ॥
सत्ताएँ अब बदली जन की परिभाषा बदली ।
स्वाँग मिटा एकाधिपत्य का, धरा हुई उजली ।

तू हलधर की स्नेह-सुजाता, पुण्यमयी माता ।
जय जनता, जय अमर भावना, जय गौरव-गाथा ॥

युग-पुरुष

भूगोल थमा, आकाश झुका, जब तुम न रहे युग सूत्रधार !
आँसू पीकर रह गई व्यथा, आशाओं पर छाया तुषार !!

तुम लिए ऐक्य की एक-तान, बन गए ताल मे 'सम' महान।
जब टूट गई सम-परम्परा, तब रुका हृदय का करुण-गान ।।
आँखे धुलगई विषमता की, म्रियमाण हुए सब दुष्प्रवाद।
तुम जाति व्यक्ति से ऊपर उठ, निर्वाण हो गए निर्विवाद !!

कर गए किनारा जब अपने, तब टूटा सतलज का कगार।
हिमगिरि की टूटी आन प्रबल, दब गया मनुजता का उभार ।।
जब बदला भारत मानचित्र, गिर गया समन्वय का वितान।
तब मेरुदण्ड बन, भार-बहन कर सके तुम्ही बापू महान ।।

अब जीवन-पद्धति-सृजन-स्वप्न ले, माँ कैसे करले सिंगार।
भूगोल थमा, आकाश झुका, जब तुम न रहे युग-सूत्रधार ।।

तुम शशि-शेखर से निर्विकल्प, निर्विषय आदि मनु-सुत समान।
आसक्ति-शक्ति को कर अशक्त, तुमने तोडी युगदित कमान ॥
तुम धर्मो मे प्रतिवाद रहे, परिशिष्ट सभ्य-युग के विशेष।
तुम स्पर्श-भेद पहिचान सके, बन गए स्वय अस्पृश्य, श्लेष ॥

अब समय नही है रोने का, इसलिए कलेजा लिया थाम।
वर्ना निराश की इस गति मे, आता न कभी यह मृदु-विराम ॥
अब रामराज्य का सबल सत्य, कठस्थ हुआ पाकर प्रसार।
पर एक ईट के लिये गिरा क्यो, मानव मदिर-निर्विकार ॥

भूगोल थमा, आकाश झुका, जब तुम न रहे युग-सूत्रधार।
आँसू पीकर रहगई व्यथा, आशाओ पर छाया तुषार ॥

नई धरा-नया आकाश

तूफानो के भीतर जब से पॉव धरा है,
तब से गति मे सबल है, विश्वास नया है !
जब से मैने गतिरोधों का दैत्य पछाडा,
तब से मेरी धरा नई, आकाश नया है !!

पीड़ाएँ आती है, किन्तु सदा मै हँसता,
युग से मैने हँसने का आधार लिया है !
असफलता की ऑधी मुझ से घबराती है,
जीवन में भोली गल्ती को प्यार किया है !!

करवट लेकर सोती नही जवानी मेरी,
पत्थर को पिघला मैने प्रण बीन लिया है !
नीद भरे बादल यद्यपि मुझपर मँडराए,
पर मैने बिजली से यौवन छीन लिया है !!

पाँव पसारे थे छाया ने दूर धरा पर,
वही धरा अब धूप सुनहरी सजा रही है !
जिस कोने मे मुरझाई थी बेल बावली,
वही फूल पत्तो को कविता सुना रही है ! !

नैया को तट पर बाँधे मै नही रहूगा,
तूफानो मे भूले पथ को जान लिया है !
लपटो मे फँस कर है भस्म सुनहरे सपने,
लेकिन मैने जग कर दिन पहचान लिया है ! !

ध्रुव-तारा

झझा के प्रबल थपेडो से, नैया कब मेरी विचलित है?
मुझको ध्रुवतारा दीख रहा, फिर क्यो कहदू पथ अविदित है!
मेरी धारा का मूल स्रोत, मानव का अन्तर निश्छल है—
हर लहर बढाती है मुझ को, मन मे आशा का सबल है!!

मैने नयनो मे भर सपने, भूतल पर स्वर्ग उतारा है!
हर परिवर्तन मे अनुभव ने, सयम से मुझे सँवारा है!!
मेरा स्वर कितना ऊँचा है, यह पूछो युग के कानो से—
मै कितना परिचित हूँ युग से, पूछो यह चिर पहचानो से!!

बलहीन नही मेरी श्रद्धा, अधा न धर्म का पालन है!
आधार न मेरा अस्थिर है, बढना मेरा परिचालन है!!
अब होड़ लगी है हिम्मत से, मस्ती से बढ कर नशा मुझे!
वासना नही भूखी छवि की, आकर्षण मे कब तृषा मुझे?

कब कौन प्रवर्त्तक है युग का, यह प्रश्न तुम्हे क्यो सूझ रहे?
हर प्रश्न बना उत्तर मेरा, फिर वही प्रश्न क्यो बूझ रहे?
निर्माण सदा सगी मेरा, विध्वंस शत्रुता करता है—
जब सिद्धि वर चुकी है मुझको, तब असफल युग क्यो डरता है?

जीवन-बसन्त

तुम्ही बताओ, कैसे आज बसत मनाऊँ ?
रोता सारा देश, और मै गीत सुनाऊँ ?
जहाँ विवशता पीती रहती सदा जवानी,
कभी न पूरी हुई क्रान्ति की शपथ पुरानी !!

मरण-यज्ञ की आहुति बनकर जलती आशा,
बहरो का है देश, मूक है यूग की भाषा ।।
अमृत पुत्रो का जीवन अभिशाप भरा है ।
पिछे पडता पॉव जिन्दगी नाप रहा है ।।

जीने के हित मरे कभी तो यह भी होता,
मरने को नित मरते, मन सपनो मे सोता ।।
कायरता की छॉह तले, सम्मान सो रहा ।
पग-पग पर बलिदानो का अपमान हो रहा ।।

कातर है तरुणाई, ऑसू भरी ऑख है ।
जलते है अरमान खुशी की बची राख है ।।
यह राख अब मस्तक पर लगती जाती है—
जलता जीवन देख, फटी जाती छाती है !!

प्यासी मिट्टी का गीत

आजा फिर ओ तूफान ! कि धीरज का सागर अकुलाता है ।
मरता मरता इसान, कि नव-जीवन के लिए बुलाता है ।।
यह क्रूर गगन कब सुनता है, धरती की करुण-पुकारो को ?
घनघोर घटाओ ! घिर आओ, अब ढकलो चाँद-सितारो को ।।

मस्ती का आलम रोता है, दर्शन का देश तरसता है ।
सूखा सघर्षण आग लगा, शोलो को लिए बरसता है ।।
प्यासी मिट्टी मे शक्ति कहाँ, जो जीवन हरा बना देगी ?
अब धूप न पाती वह गर्मी, जो भू का गान सुना देगी ! !

बिजली हर बार कडकती है, हरियाली पर गिर जाने को ।
पुरवाई लू बनकर चलती, खिलती-कलियाँ दहकाने को ।।
कैसी यह विषय व्यवस्था है, यो कब तक रोष पुकारेगा ?
कब तक निर्लज्ज बना रहकर, कोई यो लाज उधाडेगा ?
२

उमङ्ग

माँ की छाती से लाल रक्त, जब पानी बन उड़ जाता हो।
फूलो की तरह हँसी हँसता, जब शिशु रो-रो मर जाता हो!!
तब बात दूध की क्या करनी ममता को मौन रुलाता है।
यह कौन पहरुआ सुबह-सुबह, फिर गहरी नीद सुलाता है?

सावन के अन्धे मौन, स्तब्ध, कुछ समझ न पाते क्या होगा?
नित सस्कृति सग व्यभिचार करे, कहते 'पुरखो ने यह भोगा!'
गाते थे सोम-स्वरों मे हम, या नित्य सोम-रस पीते थे।
हर पुण्य हमारा दास बना, हम ही ईश्वर बन जीते थे!!

भगवान किसी को क्या कहता, हम कहते थे, हम लडते थे।
भृकुटी के एक इशारे पर, चरणो मे सब आ गिरते थे॥
विद्या-वारिधि, लक्ष्मीपति वन, हमने ही देश उठाया है।
नित तिलक छाप या पेट बढा, हमने ही धर्म कमाया है!!

सौन्दर्य हमारा अनुचर है, हम भोगे अमर जवानी को।
हर कला पुरस्कृत हमसे है, हम आग बनादे पानी को!!
बॉसो के हर सघर्षण मे, सोकर चिन्गारी जाग रही।
हर नई लहर से कुछ आगे, मैली काई है भाग रही!!

गीतों का ज्वार

ज्वाला मुखी ! अधीर न होना, पहले नभ झुक जाने दो !
ऊँचे शिखरो ! चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो !!

तिनको मे सघर्ष छिडा है, जाने कब ज्वाला भडके !
घटा घुमड कर घिर आई है, जाने कब बिजली चमके !
थकी जवानी को जीवन की, मुस्कानो पर पलने दो !
बुझे दिये को नए सिरे से, आज भोर तक जलने दो !!

छली हुई--क्यो साँस पवन की, तूफानों को आने दो !
ऊँचे शिखरो ! चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो !!

समय नही है, आज प्रिया के अधरो पर झुक जाने का !
समय नही है, आज प्रीति की मिठी कसमे खाने का !!
समय नही है, आज चाँद से आँख मिले, कुछ बात बने !
समय नही है, तारो के उस पार, खुशी की रात मने !!

घुट-घुट कर मर रही रोशनी, उसे दूर तक जाने दो !
ऊँचे शिखरो ! चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो !!

नंगी पडी धरा थी पहले, भूख स्वयं अब नगी है।
माँ की छाती से चिपटे, शिशु को जीने की तगी है।।
प्यासी आँखे बता रही है, खून चूकता जाता है।
नंगा भूखा ऐयाशी पर, आज थूकता जाता है।।

शोषण नित शृंगार कर रहा, उसे न अब मुस्काने दो।
ऊँचे शिखरो ! चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो।।

देखा, धूप उदास पडी है, कण-कण धरती का डोले।
खेत खडे नभ से रस माँगे, अन्न पडे है अनबोले।।
पकी फसल तो कटी यहाँ पर, बहुत युगो से भी पहले।
अब तो साजिश आँख बचाकर, खीच रही पर्दे मैले।।

समय-देवता जाग रहा है, पापो को सो जाने दो।
ऊँचे शिखरो। चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो॥

माटी की मूरत को पापी, सजा-सजा कर रखते है।
श्रम से बनी हुई ठठरी को, कौन जतन से ढकते है।।
बेच दिया ईमान किसी ने, प्रण करके मुँह मोड़ लिया।
जनता ने भी बडी भूल की, बैल खेत मे छोड दिया।।

डूब रहा क्यो उगता सूरज, उसको नभ मे जाने दो।
ऊँचे शिखरो। चुप हो बैठो, झोपडियो को गाने दो।।

क्रान्ति और निर्माण

क्रान्ति नही इतिहास पुराना लिखवाती,
क्रान्ति सदा तलवार कलम है सग लाती।
क्रान्ति नही पूजा करती युग-शापों की,
क्रान्ति सदा सुनती ध्वनि, श्रम-पद चापो की !

परिवर्तन लाना इतना आसान नही,
क्रान्ति किसी की दो दिन की मेहमान नही।
जीत नही होती, जब तक बलिदान नही,
नई पीढियाँ रक्त न दे, तो शान नही !

अंधकार की सेना बढती पाँव उठा,
मानवता के सैनिक उठ, अब दाँव लगा।
क्रीतदास को मालिक का पद देना है,
पूजीवादी सस्कृति से श्रम लेना है !

भ्रष्ट जहाँ के मानव हो, वह देश नही,
वहाँ आग ठढी है, युग-उन्मेष नही।
पाँव पसारे जहाँ सिपाही सो जाते,
वे आजादी को पाकर भी खो जाते!

नया सबेरा, सूरज नया हमारा है,
अधकार तो अब किस्मत का मारा है।
बड़ी देर से डूबा पुच्छल तारा है,
बड़ी देर से टूटी मानव-कारा है!!

ज़िन्दगी

आज कितने देव जिनको मनुजता स्वीकार है ?
मै नया मानव जिसे देवत्व से इन्कार है !!

आज नश्वर मै, अमरता से न मुझको प्यार है
अमरता नश्वर बने तो, यह मुझे स्वीकार है !!

मरण की स्मृति को मिटा, जीवन लुटाने आ रहा !
मै पराजय से घिरा, अब जीत बनकर छा रहा !!

गीत वे किस काम के, जो ज़िन्दगी को भूलते !
प्राण वे किस काम के जो बीच मे ही झूलते !!

युग-सत्य

परिधि मेरे अनुभवो की, फैलजा श्रम से मधुर बन ।
फैलजा अनुराग मेरे, मनुजता के स्रोत मे छन ॥
जागता है आज नूतन शक्ति का शृंगार जनमन ।
प्रेरणा के लौह-पट पर, सज रहा है भाव-कचन ॥

हो रही अकित हृदय पर, बदलते युग की निशानी ।
मान बदले कल्पना के, माप से आगे कहानी ॥
हो रहा प्राचीन अर्वाचीन मे खुद ही समाहित ।
जल रहा जो व्यर्थ है, बस चल रहा जो है प्रवाहित ॥

सत्य है अक्षुण्य वह, जो नित्य छूता भावना को ।
राग को कर सरस स्पन्दित, मुखर करता अर्चना को ॥
धार विकसित हो रही है, स्रोत का है मूल अवगत ।
अन्ध-श्रद्धा कर रही है, आस्था की दृष्टि कम्पित ॥

जागता इतिहास पीछे देखकर ही बढ रहा है ।
पॉव भी पाताल से उठ, नवशिखर पर चढ रहा है ॥
कौन सामजस्य है, इस विषमता के जाल भीतर ?
ढूढता है मार्ग जीवन, दीप की लौ को बढाकर ॥

नया-इन्सान

मौत को तो छोड आया मोड पर मै,
जिन्दगी के साथ बढता जा रहा हूँ।
शून्य भावो की स्खलित-सी अर्चना पर,
चेतना की आग धरता जा रहा हूँ॥

क्या बताऊँ, हाल क्या है जिन्दगी का,
क्या बताऊँ किस कदर हैरान हूँ मै।
क्या वताऊँ, बात का अन्दाज चुप क्यो,
पर न बोलू तो निरा हैवान हूँ मै॥

राह काँटो से भरी कटनी कठिन थी,
फूल तो आए जरा सा साथ लेकर।
आज तो मै बढ रहा अपने सहारे,
हाथ मे हँसता हुआ यह माथ लेकर॥

पॉव मे बेडी पडी तो क्या हुआ फिर,
मै शिखर पर आज चढ़ता जा रहा हूँ।
कहर से कुचली जुबॉ को होश देकर,
नित नवीन भविष्य पढता जा रहा हूँ॥

४

आज हसरत ने चुनौती दी मुझे है,
आज किस्मत ने चुनौती दी मुझे है।
पर चुनौती में स्वय हूँ जिन्दगी मे,
फिर भला किसने चुनौती दी मुझे है॥

रक्त पीने मे मजा है या सजा है,
यह न पूछो, क्योकि कातिल को अपच है।
आज मिट्टी हो रही उसकी कमाई,
वह जिएगा और यह बिल्कुल न सच है॥

मिट चुके पुतले विधाता के पुराने,
मै नया इसान गढता जा रहा हूँ।
अब गरीबी ही खरा सोना हमारा,
रत्न उसमे आज जडता जा रहा हूँ॥

गलत थी पिछली व्यवस्था, परख ली है,
गलत थी वह जिन्दगी, उसमे न दम था।
सत्य तो है आज से निर्माण मेरा,
सत्य तो है बदलता इन्सान मेरा॥

पथराई पलकें

पर्वत फोड आज झरनो ने,
रक्त बहाना शुरू कर दिया।
नदियो ने अपनी गोदी मे,
मानवता का नाश भर लिया।

सागर की उठती गिरती—
साँसो को नभ अब नही सभाले।
आज हवाएँ लिए पसीना
रुकी खडी, थक गए उजाले।

सिसक रही जिनकी पीडाएँ,
दारुण दाह लिए सीने मे।
दुख को भी दुख लगा हुआ है–
रहा न रस जिनके जीने मे॥

मचा हुआ कुहराम देश मे,
आज अधेरी रात न बीते।
भूखो की आँखो के सम्पुट,
ज्योति बिना दिखते है रीते।

पथराई पलको के भीतर,
शीशा आज भर चुका देखो !
कठो मे ले प्राण तड़पकर,
मानव आज मर चुका देखो !

कौए और चील से शोषक,
भूखो का ले मास उड़ रहे !
प्रभुता के वरदान दीन की—
आँत खीचकर पेट भर रहे !

मुर्दो की दावत मे देखो,
पापी साहूकार मिले है !
हुँआ-हुँआ करते नगे—
भूखो पर इनके दाँव चले है !

तैर रही है मौत किसी की,
आज अरे इनके प्यालो मे !
नमक भर दिया आज इन्होने,
मानव के फूटे छालो मे !

पथराई पलके

रक्त जमा होता जाता है,
चाँदी मे ढलता जाता है !
शोषण की ज्वाला मे आँसू,
स्वय आज जलता जाता है !

कट-कट कर अरमान गिर गए,
जैसे धड़ से शीश उड गए।
कितने ही मायूसी के—
जबडो मे अपनी चाह धर गए !

उलझ उलझ कर राते आई,
किन्तु न मादकता सँग लाई ।
तारों ने मुंह छिपा लिया जब,
देखी सुहागिने शरमाई !

बाल पकडकर आज पाप ने,
भूखी धरती माँ को खीचा।
वह माँ जिसके आँसू ने—
मानव के प्राणो मे रस सीचा !

क्षोभ हुआ पशुता के दिल मे,
उसकी भी आँखे भर आई ।
स्वय नाश कसमसा उठा, जब–
देखे उसने मीत कसाई !

आज गरीबी गाय बनी है,
खाती है बस चारा सानी ।
दुहने वाले दुह लेते है,
बिकता है बस कोरा पानी ।

गलत राह पर चलते जाते,
आजादी के पहिए सुन्दर ।
बातो की सरपट गाडी मे
उडते गोरख और मछन्दर ।

दाँव हार कर भी जनता से,
मोह लिए बैठे हत्यारे ।
इधर नए रावण की जय है,
उधर राम बैठा मन मारे ।

धरती माता बिलख रही है,
रावण ने सीता हरली है!
इधर राम ने भी रावण से,
बिना शर्त सन्धि कर ली है!

चित्र लिखी सी खडी आज,
जनता अपना परिहास देखती।
अपनो पर से अपना ही वह,
उठा हुआ विश्वास देखती!

एक-एक अकुर धरती का,
लाख-लाख के प्राण बचाता।
एक-एक मानव धरती का,
धरती माँ की गोद सजाता!

भूखो मे तो रहा न कुछ,
अब खर, शृगाल, श्वान रोते है।
इधर रक्त पी जीने वाले,
सुख की नीद पडे सोते है!

आज गरीबी जहर पी चुकी,
नील कंठ की चाल चलेगी !
ऐयाशी की देह फाडकर,
श्रम को मालामाल करेगी !

नए दौर की नई जिन्दगी–
को बुलद करने अब आओ !
गड़े हुए मुर्दो को थोडा,
और अधिक गहरा दफनाओ !

रोम रोम को वाणी देकर–
आज नया स्वर पुनः उठाओ !
काले और कलकित शोषण की
छाती पर वज्र गिराओ !

धीरज की सीमाएँ टूटी,
सिहर उठा आहो का गाना !
आज आँसुओ तुम्हे कसम है–
आँखो से बाहर मत आना !

चुनौती

तूफान रौंद कर आया हूँ, फिर तेरी तो क्या हस्ती है,
कुचला जाऊँ इन पाँवो से, जिन्दगी न इतनी सस्ती है ! !
मै नही दीप जो बुझ जाता, बस-क्षुद्र हवा के झोको मे,
मै नही प्यार, जो बिध जाता, नित नयन-बाण की नोको मे! !

रसना पर छाले पडे किन्तु विश्वास बोलता रहता है !
आँसू का वेग रुक चुका लेकिन रक्त हृदय से बहता है ! !
वचन मे सिसकी साँस किन्तु, आशा का बल तो उमडा है—
मै नही शरद का मेघ जो कि धोखा बनकर ही घुमड़ा है ! !

सप्राण सामाजिकता

बढते मेरे पॉव थके है तेरे पंख,
आ धरती पर देख विजय का बजता शख !

बदल रहे है सब उपाय—साधन, नव-प्राण।
पथ पथ पर उगता, जीवन का वैभव-गान।
तूफानों ने आज किया, जन-जन अभिषेक !
आज हवा मे नही हो रहा भावोद्रेक !

अनुभव लिए कसौटी, परखे बढते पाँव।
कही न गलती से लग, जाए झूठा दाँव।
चेतन मेरे पॉव, सो रहे तेरे पंख—
आ धरती पर देख, विजय का बजता शख।

परिवर्तन अब मॉग रहा नव-जीवन चाह,
सच कहता हूँ, बहुत पुरानी तेरी राह !
इसे बदल दे, नई सृष्टि का ले उत्साह,
सर के बल अब नही बहेगा रूढि-प्रवाह।

भावभूमि पर उतरी जब तक मधुमय तान,
तब तक नभ के पार उडी जीवन-मुस्कान !
उजले मेरे पॉव, बुझे है तेरे पख—
आ धरती पर देख, विजय का बजता शख !

सप्राण सामाजिकता

निष्क्रिय संस्कृति से न कभी तू कर सम्बन्ध,
सच कहता हूँ कर देगी, वह गति को अंध।
सामाजिकता कभी न होती यो सप्राण,
मानवता को नही मिलेगा यो परित्राण !

किसी छत्र छाया मे पला हुआ अवसाद;
बदले वेप खडा सस्कृति का पूजीवाद !
गाते मेरे पॉव, मौन है तेरे पख—
आ धरती पर देख, विजय का बजता शख !

आज क्रान्ति का बधन ढीला करता कौन ?
इधर देख, युग-वणिक खडा है बिल्कुल मौन।
इनसे जब तक नही करे, निर्मम सघर्ष,
कैसे आएगा समता का पहला वर्ष।

जनता के दुश्मन की कठिन नही पहचान !
उलझी हुई परिस्थिति से उलझेगे प्राण !
चलते मेरे पाँव, शून्य है तेरे पख !
आ धरती पर देख विजय का बजता शख !
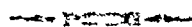
जहाँ ज्वाला थर्राती है

जहाँ से पीडा बहती है, वहाँ आँसू रुक जाते है।
जहाँ ज्वाला थर्राती है, वहाँ बादल झुक जाते है।

प्रणय की कुटिल कहानी है,
मिटाई हुई निशानी है।
आँख मे जितना पानी है,
वही तक जली जवानी है!

जहाँ से आहे आती है, वहाँ लूएँ थम जाती है!
जहाँ सिहरन अँगडाती है, वहाँ ब्रीडा शरमाती है!

मुझे मत पूछो क्यों रोता,
मुहब्बत जलती देखी है।
मुझे मत पूछो, क्यो खुश हूँ–
निराशा फलती देखी है!

जहाँ ज्वाला बरसती है

समय की गति रुक जाती है, तभी विश्वास काँपता है !
दौड़ता भय से डर कर सत्य, सत्य का साँस हाँफता है !!

चले हैं शूल फूल के साथ,
तभी तो हँस हँस मरता है।
दुखों की आँधी आती है,
तभी बुल-बुल मचलता है।

हृदय के हाथ नहीं होते, आँख से देखा करता है।
आँख के हृदय नहीं होता, तभी तो आँसू बहता है !!

पूछना नहीं मुझे यह भेद,
तुम्हारी धड़कन क्यों सोई ?
पूछना मुझसे भी मत आज,
धड़कने मेरी क्यों रोई ?

रुदन तो हँसता है दिलदार, हँसी को रोना आता है।
मुझे मिलते सपने साकार, स्वप्न तुमको बहकाता है !!

सुनहरी भोर

विजय का विश्वास लेकर आ रहे है,
जागरण मे स्फूर्ति बनकर छा रहे है !
स्वप्न को मजिल मिलेगी स्वप्न मे—
हम भँवर को छोड, तट पर आ रहे है !

जब कभी मानव हुआ बेजार युग का,
तब खुला युग-शक्ति शास्त्रागार युग का !
युग न उत्पीड़ित कभी विष-ज्वाल से है—
लपट मे घिर कब बुझा अगार युग का ?

हम न मुर्दा सूत्र रटते क्रान्ति के अब,
हम न अगुआ है, सुनहरी भ्रान्ति के अब !
दॉव पर सघर्ष लेकर जुट गए है—
बढ रहे है पख खोले शाति के अब !

होठ पर झुक स्वप्न जब थे मुस्कुराए,
हम उन्हे कुछ क्षणो तक ही देख पाए !
अस्थि-पजर आज ढीला स्वप्न का है—
जागरण की भोर मे, अब ओस गाए !

जन-जीवन

जन-जीवन तो अपघात नहीं करता है ।
पिछड़ी दुनियाँ से बात नहीं करता है ।

'कौशल का नाम कला है', कहते दुर्मुख !
सुन्दर, पर हीन-अर्थ जीवन का, क्या सुख ?
अपने सुख के हित लिखना सदा अनर्गल,
आनन्द और तन्मयता इंद्रियगत छल ।

वह अर्थहीन कल्पना स्वप्न-द्रष्टा की,
मानस में रह व्यभिचार किया करती है ।
कुछ महल हवा में बनते और बिगड़ते,
विकृत जीवन की लाश वहाँ जलती है !

जो हार चुके है आज लड़ाई अपनी,
वे ही तो सदा पलायन पोषण करते ।
होगया नपुंसक जिनका पुण्य पराक्रम,
वे ही तो जीने के हित शोषण करते !

लेकिन यह जीना भी क्या जीना साथी,
तूफान के पल्लू में छिप [illegible] बजाना ।
मिट्टी के बने घरौंदे ऊपर रहना,
सिकता मृग-तृष्णा से नित होड़ लगाना ।

उगना

जो आत्म-तृप्ति के पीछे ही पड़ जाना,
प्रत्यक्ष मृत्यु-आह्वान नहीं तो क्या है?
जीवन के विगत भुलाकर स्वर्ग दिखाना–
प्रत्यक्ष नरक-निर्माण नहीं तो क्या है?

है वर्तमान पर जिम्मेदारी मेरी,
अनुकूल क्यों न होगा, भविष्य फिर मेरा।
मैं नित्य नहीं, पर गति का तो नश्वर हूँ,
हूँ 'अल्प' आज, कल, परिवर्तित 'चिर' मेरा!

जन-जीवन-कवच आज फिर पहन चुका हूँ।
उससे मैं नित्य सुरक्षित ही रहता हूँ।
संस्कृति की शिक्षा मुझे इसी में मिलती,
जीने की बात तभी तो मैं कहता हूँ।

हर मंजिल पर मेरा विकास हो जाता,
मैं सृजन-शक्ति का ह्रास नहीं हूँ पाता।

क्योंकि–

जन-जीवन तो अपघात नहीं करता है।
पिछड़ी दुनियाँ से, बात नहीं करता है।।

मंज़िल

पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ।

मेरे नयन सजग है निशिदिन,
कौन भला फिर इनको घेरे ?
स्थिर अस्थिर यह प्रगति नही है,
ये विश्वास भरे डग मेरे ।।

कितनी दूर कहाँ तक आया, केवल इतना ही गुनता हूँ ।
पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ ।।

कथा पुरातन दीप-शलभ की,
कैसे मुझे प्रेरणा देगी !
विरह जनित ज्वालाएँ भी क्या,
धडकन के सग स्पर्श करेगी ?

मै प्रकाश को, 'तम' कह-कह कर, कभी न अपना सिर धुनता हूँ ।
पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ ।।

ये काले घन जब जब बरसे,
सग लिए पावन पुरवाई ।
नभ की गोदी से स्पन्दित हो,
सध्या सोती ले अँगडाई ।

तब रुक कर, तारक-किरणो पर, गीले गान नही लिखता हूँ।
पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ।।

उलझन को उलझन कहना तो,
अर्थ हुआ अवगत ही होना।
आँख मूँद सब-कुछ खोना तो,
अर्थहीन साँसो का ढोना।

जगते ही विलीन हो जाएँ, मै वे स्वप्न नही बुनता हूँ।
पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ।।

मै हूँ उस धरती का अकुर,
पनप उठा तो पनप उठा अब।
ऋतुओ की बर्बरता समझूँ,
इतना अवसर मुझे रहा कब ?

मै बिखरे बीजो मे अपनी, नित नूतन कविता सुनता हूँ।
पहुँच सकू मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ।।

सावन के अधे तो वे है,
जिन तक पीड़ा पहुँच न पाती।
डस लेने पर, जो न मर सके—
ऐसे जीवन का मै साथी।।

मुझे डसे वह खुद मर जाए, मै तो उस बिष मे पलता हूँ।
पहुँच सकूँ मजिल तक सत्वर, केवल वह पथ मै चुनता हूँ।।
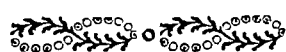
सन्नाटे की घातें

गाज गिरेगी पहले उनपर जो अपने को ढाँप रहे है ।
रक्षा होगी पहले उनकी, जो नभ नीचे काँप -हे है ।।
तारो की किरणे पीने तो, ऊँचे शिखर गगन तक आते ।
नीचे तल मे मनु के बेटे, भूखे प्यासे है चिल्लाते ।।

इसानो का तरल रक्त पी, जिनकी प्यास नही वुझती है ।
मदिरा की लाली मे जिनकी, लाल आँख डूबी रहती है ।।
उनसे पूछ रहा हूँ मै, कब तक वे जश्न मनाएगे यो ?
शिखरो वाले कब तक नभ को, मधु-सगीत सुनाएँगे यो ?

नभ सूना है, धरती चेतन, घूम रही है, घूम रही है ।
हर चक्कर मे वह ऊपर आ, नई क्राति को चूम रही है ।।
नई क्राति मे मनु के बेटे, धरती का गुणगान करेगे–
चदा की चितवन पर वे अब, मस्ती का रग नही भरेगे ।।

आज हवाओ पर भी होती है कुछ सन्नाटे की घाते ।
रुक-रुक कर वे जन-जीवन की, समझ रही है गहरी बाते ।।
ओ जनता के नए नाविको ! सभलो, निज पतवार सभालो ।
गरज रहा तूफान देखलो, लहरो पर अब नाव उठालो ।।

नई कोंपल

आज सुर्खी आ रही है कोपलो पर,
आज शबनम लाल सूरज पर मिटी है।
हो रही पहली सुबह भी आज रस्मित—
जिन्दगी लो, जिन्दगी से ही सटी है।।

हाथ मेहदी की सुगन्ध न आज चाहे।
रात मिलने की मिलन सुख अब न चाहे।
होठ की सुर्खी न पिय की प्यास चाहे!
जुल्फ नागन बन, न डसना आज चाहे।

प्यार परिवर्तन बना अब जा रहा है।
पॉव मे नूपुर प्रखर स्वर ला रहा है।
तन गई ककाल की भी क्षुद्र छाती—
अश्रु मे धूँआ घुमडता आ रहा है।।

नई कोपल

उबलता है खून शोले उठ रहे है !
फडकती है बॉह भोहै तन रही है !
सट गए होठ आपस मे सिमिट कर,
रक्त की बुदे नयन से छल रही है !!

छॉह युग की हो रही अब बेसहारा,
धूप की तेजी रवानी ला रही है।
मौत का डर मौन कब तक साध लेगा ?
जिन्दगी मे अब जवानी आ रही है !!

अब नया ही हाथ लिखने को उठा है,
अब नया ही माथ उठने को उठा है !
अब नया इतिहास मानव का बनेगा—
लाश का यह दुर्ग ढहकर ही रहेगा !!
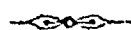
अंधकार भागता है

गरज रहा विश्वास, कह रहा-हम न मरेंगे।
पतझड है, पर युग शाखा से हम न झरेंगे॥
पत्ता पत्ता आज वृक्ष का आकर्षण है।
सूखी डाली, शेष रह गया भूला व्रण है॥

व्यर्थ ववडर मे न वढ रहे आज अनिश्चित।
उलझन के ताने वाने मे भाव न गुम्फित॥
निश्चित है अव राज-मार्ग-सा लक्ष्य हमारा।
वाणी मे है गूज रहा जीवन का नारा॥

आशा के पॉवो मे मेहदी नही लगी है।
आज प्रतीक्षा भी अवसर से नही ठगी है॥
गर्म सॉस नथुनो से अग्नि लिये आती है।
प्रगति स्वय है सजग अँधपति सकुचाती है॥

अधकार भागता है

मौसम मे न खुमार, किन्तु मस्ती उमडी है ।
बिना पिये अलमस्ती हर दिल मे घुमडी है ।।
बलशाली भुजदड व्यर्थ का बल न तोलते ।
बकता है आलस्य, कर्म कुछ नही बोलते ।।

धृति के बल से हीन कल्पना भू पर लुठित ।
दुर्बलता शृगार करे, यह अनुचित अनुचित ।।
शक्ति स्वय गतिशील, पॉव कमजोर डोलते ।
काम से अर्जित पुष्प कभी पर्दा न खोलते ।।

उठते है तूफान, अरे उठने दो उनको ।
जमता है विश्वास, अरे बढने दो मन को ।।
रोको मत, यदि रोका तो खुद उड जाओगे ।
या हेठी हेठी मे उल्टे मुड जाओगे ।।

बढना ही जीवन है, शाश्वत कब बढता है ।
उल्टे चलना मरना है, जीवन घटता है ।।
ऑखो मे है नशा, हिरन हो रहा धुँआ है ।
कॉप रहा पतली चमडी पर रुऑ रुऑ है ।।

उमङ्ग

आज रुद्ध कंठो से स्वर उभरा आता है।
आज मौन भी सिहर उठा, गाना चाहता है॥
अनुभव से कटुता ने अमृत को पी डाला।
पी डालेंगे अगर जहर ने हमे न ढाला॥

हम ढलते है सिर्फ, तभी जब हाला बनते।
हम गलते है सिर्फ, तभी जब पाला बनते॥
हम मलते है हाथ जब कि बस माला गिनते।
हम खलते है तभी जब कि हम लाला बनते॥

हसरत के हाथो बिक जाना, मर जाना है।
करना कुछ बिन जले, आग से डर जाना है॥
जलकर ही तो बनता शुद्ध तरल सोना है।
धमनी को ठडा रखना, जगते सोना है॥

रपट रहा है पॉव, आज शाश्वत दल दल मे।
झपट रही है मौत, जिन्दगी की हल चल मे।
किन्तु जिन्दगी मौत छोड आई है आगे।
देख रोशनी सभी अँधेरे डरकर भागे॥

संघर्ष

घोर पलायन मे सघर्प सजाता हूँ मै।
भटके मनको वापस आन बुलता हूँ मै ।।
याद तुम्हारी तुम्हे आज लौटाता हूँ मै ।।

भग्न-प्रेम की सुन बाते, हँस देता था मै।
अपने गीतो का मधु-स्वर भी लेता था मै ।।

आज हृदय सागर मे क्षार मिलाता हूँ मै।
भटके मन को वापस आज बुलता हूँ मै ।।
याद तुम्हारी तुम्हे आज लौटाता हूँ मै ।।

धूल भरे सपनो की कचन काया कितनी ?
व्यथा भरे सोए बसत की छाया कितनी ?

शून्य शब्द मे, शब्द-चेतना लाता हूँ मै।
भटके मनको वापस आज बुलाता हूँ मै ।।
याद तुम्हारी तुम्हे आज लौटाता हूँ मै ।।

मेरे गीत

अभिमान मुझे इन गीतो पर,
जो मुझे नया पथ दिखलाते है

इनकी स्वर-लहरी लिये कामना मेरी !
इनकी थिरकन मे पली भावना मेरी;
इनके पीछे है, मौन वेदना बैरिन –
इनके आगे पावन मुस्कान सुहागिन !

ये प्रीत बताते और छिपाते ह–
ये गीत हँसाते और रुलाते है !

सुनते है सुनने वाले, ध्यान लगाकर,
कहते गाथाऐ, मेरी मुझे सुनाकर,
मै गहराई मे और चला जाता हूँ,
अपने मे डूबा थाह नही पाता हूँ !

ये गीत नया पथ फिर दिखलाते है !
ये गीत हँसाते और रुलाते है !!

मेरे गीत

गोधूली मे वशी का स्वर आता है,
फिर साझ पडे, तारो मे स्वर जाता है ।
फिर रात बिना ही रुके गीत गाती है—
फिर भोर 'लगी निंदिया' पर मँडराती है ।

प्रिय के पद-चाप तभी कुछ गाते है ।
ये गीत हँसाते और रुलाते है ।।

शिशु सा भोला जीवन मेरे गीतो का,
देखो तो धीरे से ही नजर लगाना,
यदि मन मे थोड़ा मधुर भाव आजाए—
तो न्यौछावर कर देना, मन मस्ताना !

इसका अपराध यही है, ये गाते है ।
ये गीत हँसाते और रुलाते है ।।

पाषाण-चेतना

मुस्कुरा पाषाण तू,
फिर देख मेरा प्यार अनुपम !
चेतना ने भर दिया है,
शून्यता मे आज सरगम ।

मे सदा जीवन उँडेलूँ, रिक्त अन्तर के प्रलय मे,
मे उजाला हूँ तमिस्रा के घने नीले निलय मे ,

बस रहा हूँ मै किसी की,
बीन के स्वर पर लिये सम ।
मै पराजय को न दूगा,
रुदन का अधिकार, अवसर ।
मै निराशा को न दूगा,
विनय का उपहार मनहर ।

मै सदा उल्लास बनकर, दीप को विश्राम दूगा ।
डूबते नि श्वास से, उच्छ्वास का ही काम लूगा ।

मै सुनहरा प्रात हूँ जो,
छोड आया दूर का तम ।
मुस्कुरा पाषाण तू,
फिर देख मेरा प्यार अनुपम !

अपराजेय

लडखड़ा कर गिर रही दुनियाँ पुरानी !
ले रही अँगडाइयाँ युग की जवानी !!
खुल रही है गाँठ बंधन की !
टूटती है, सांस क्रंदन की !!

कर चुका व्यभिचार बूढा काल मानी,
लडखडा कर गिर रही दुनियाँ पुरानी !

स्वस्थ जीवन हो रहा चौकस प्रणय का,
फोडकर अडा निकल भागा समय का !
ढल रही है छाँह संध्या की !
खुल रही है कूख वंध्या की !!

प्रगति को यह बात फिर से है बतानी,
लडखडा कर गिर रही दुनियाँ पुरानी !

शक्ति खो बैठीं पुरानी मान्यताएँ,
आरही संघर्ष करती सफलताएं !
क्राति है संयत विचारो की !
भावना के चाँद तारो की !

है नये आकाश धरती की कहानी,
लडखडा कर गिर रही दुनियाँ पुरानी !!

रूढिगत पाखड की टूटी नसो को,
जोड़ कर बहता हुआ, मत रक्त रोको !
शुद्धि होती है शिराओ की !
वृद्धि होती प्रेरणाओ की !!

क्राति की बुनियाद की पहली निशानी,
लड़खडा कर गिर रही दुनियाॅ पुरानी !

जीत होती है स्वशासन की !
हार होती है कुशासन की !
यह लड़ाई जिन्दगी की चल रही है,
रोशनी का जोश लेकर जल रही है !

व्यूह का है केन्द्र फौलादी जवानी !
लडखड़ा कर गिर रही दुनियाॅ पुरानी !

धरती का शृंगार

तुझे चुनौती देता हूँ मै, कल्पित सोने के ससार !
देखू, कैसे इस धरती का, छीन सकेगा तू शृगार ?
क्रूर निरकुश अभिलापा की, छोड़ी युग ने है पतवार !
पार पहुँच अब कहाँ विसर्जन ? कौन क्लीव यह कर्णाधार ?

डूब-डूब कर सदा उदासी, फँसी पक मे ले अवसाद !
अब उल्लास बिखरता देखो, नई सतह पर छोड प्रमाद !
जलने मे विश्राम कहाँ, मिटने मे तो मिटता आधार—
कल्पित सोने के ससार !

आशान्वित है आज प्रतीक्षा, समझदार है यौवन प्यार !
घावो पर है स्वस्थ हँसी अब, खिलने को होता अभिसार !
शुन्य हृदय ने, चहल-पहल का देख लिया है फिर ससार,
कल्पित सोने के ससार !

आँखो की पावस ने जबसे, पौधो मे देखा आकाश,
उमड-घुमड कर बरसा करती, बीजो को देने अभिलाष !
है प्रतिकूल न युग का बादल, समय गा रहा है मल्हार !
कल्पित सोने के ससार !

कब तक असंतोष की ध्वनि मे, मधुर शब्द का ले आधार ;
गाएगा युग गीत मिलन के, बजा-बजा कर टूटे तार !
तोड़ शृखला- सोने की, विद्रोह किया करता है प्यार !
कल्पित सोने के ससार !

रक्त सींच कर जहाँ मनुज, पीता है केवल बन्दी प्यास ,
वहाँ कब तलक चुप साधेगा, नई क्रान्ति का उष्ण विलास!
स्वर्ग देखने वालो पहले, निकलो तोड नरक का द्वार—
कल्पित सोने के ससार ;

है स्वतत्र अभिव्यक्ति किन्तु,कोलाहल तो अभिव्यक्ति नही !
सचय करले शक्ति, किन्तु पदलोलुपता तो शक्ति नही ,
दानव से धरती कब सजती, मानव ही धरती का सार !
कल्पित सोने के ससार !

तुझे चुनौती देता हूँ मै,
देखू कैसे इस धरती का छीन सकेगा तू शृगार ।

जन-मन जाग रहा है

जाग रहा है, जाग रहा है, जनमन धीरे-धीरे !
सूरज निकल रहा है देखो, जन-समुद्र के तीरे ! !

लाल खून मे डूबी यह तलवार काट दो साथी—
वर्गो की खाई को मिलकर अभी पाट दो साथी !
तभी बराबर जीवन होगा, वर्ना पिस जाएगे !
जन-ताकत के पुर्जे टकराए तो घिस जाएगे ! !

जी हुजूर की नाक तले, बे मौत मरे क्यो, साथी ?
निश्चित है जब जीत, हार की बात करे क्यो साथी ?
आओ मेहनत के मस्तानो, आओ मेरे नये तरानो !
आओ खेत मशीनो वालो, आओ धरती के बलवानो! !

आओ मिलकर भुजा उठाकर, पैर जमाकर शीश उठाकर ।
वायु और जल से टकरा कर, कँधे से कँधा जुड़वाकर ।।

आओ नई प्रतिज्ञा ले ले, निश्चय की सौगन्ध उठाले ।
एक जूट हो, मूल-चूल परिवर्तन का सामान जुटाले ।।
आओ बाँट-बाँटकर खाले, फिर भूखो की जात न होगी ।
बिन खाए, बस पानी पीकर, सोने वाली रात न होगी ।।

आओ, पहले इन हाथो मे, वज्र थमाले एक साथ हम ।
और धरा पर अगद का सा, पाँव जमाले एक साथ हम ।।
टस से मस फिर होगी नही जवानी अपनी, यह निश्चय है ।
कभी पुरानी होगी नही कहानी अपनी, यह निश्चय है ।।

जन-पथ पर से ककड पत्थर, शीघ्र हटाले तभी विजय है ।
पथ रोडो को छाँट-छाँट कर, यही बिछाले, तभी विजय है ।।
गति मे हो तूफान और निर्माण निरन्तर, तभी जिएगे ।
जो बर्बर है उनके जीवन मे स्पदन दे तभी जिएगे ।।

जिन्हे नही खेतीहर भी पहचान, उन्हे बुझ जाना होगा ।
जिन्हे न आती श्रम की रखनी आन,उन्हे मिट जाना होगा ।।
नई क्रान्ति के नेता है, मजदूर मशीनो, करघो वाले ।
नई क्रान्ति के बेटे है, उद्योग हथौडो के रखवाले ।।

नई नीति के निर्माता को, अपनी ताकत दिखलाने दो ।
दुनियाँ के श्रम-सीकर को अब, भू का मस्तक चमकाने दो ।।

तेरी याद

हिचकियो के तार को जब खीच लाती याद क्यो ?
हाय फिर सौदामिनी सी, तडप जाती याद क्यो ?

लोचनो मे प्यास का संसार कितना क्या कहे ?
लोचनो ने पी लिया है, प्यार कितना क्या कहे ?

दीप सी बुझ कर निरा धूआ उठाती याद क्यो ?
हिचकियो के तार को है, खीच लाती याद क्यों ?

जल रही अगार सी यह देह तेरी याद में—
याद की पूजी लिये, आबाद है, बस याद मे !

हर घड़ी मे स्वप्न की दुनिया बसाती याद क्यो ?
हिचकियो के तार को है खीच लाती याद क्यो ?

प्रश्न उत्तर

भूख का है प्रश्न,

उत्तर एक है,

धन-धरा को बाँट दे,

रात काली काट दे।

भूख जब मुँह खोलती

आदमी को तोलती।

पर कभी, जब—

आदमी की धमनियाँ हैं खोलती!

भूख भी तो कुछ नहीं तब बोलती!!

आज हैजा,

प्लेग कल है!

यह किसी इंसानियत के शत्रु का ही

विकट छल है!

है नहीं विश्वास?

तो फिर,

साथ आओ!

एक देखो—

गुदगुदा तकिया लगाए सो रहा है

दूसरा यह

भूख से व्याकुल सड़क पर रो रहा है!

एक देखो–
माँग मे सिन्दूर भरकर गुनगुनाती,
दूसरी,
बन काम-चेरी,
हड्डियो का रस पिलाती !
प्यार : पैसा, आज है पर्यायवाची,
इसी के बल पर,
बहन,
माँ,
बहू नाची !
सड़ गया तन,
गल गया मन
कुण्ठ से, पीडित हुई आवज है
राम जाने कौनसा यह राज है ?
भूख का है प्रश्न,
उत्तर एक है,
धन-धरा को बाँट दे।
रात काली काट दे !!
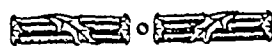
आधी दुनियाँ

आधी दुनियाँ, महा एशिया !
कभी बडा सम्पन्न,
किन्तु अब,
वणिको का मोहताज एशिया !
इसकी सीमा मे
असीम श्रम ने विश्राम न लेकर
निशिदिन
वह अखड थी ज्योति जगाई !
बडी पुरानी
सस्कृति से गर्वोन्नत होकर,
लोग यहाँ के
सुन्दर और सुखी जीवन के
दुर्ग बनकर रहते आए !
परिवर्तन के साथ
दुर्ग ढहते भी आए !
और हुआ निर्माण कि इतना
दिल ललचाया
पश्चिम के पारगत प्रभु का
आया बडा जहाजी बनकर,
आया दूल्हा सा बन ठन कर !
और बिछाया जाल सुनहरा

उपनिवेश बन ..
घड़ी दो घडी लगी,
दूल्हा को
दुल्हन सजी–सजाई मिली,
भोग, उपभोग किया–
फिर ऐसा जकडा बाहुपाश मे
उत्पीडन मे,
हिन्दू-नारी सी,
आधी दुनियाँ दब कर रह गई,
कि बोली–
'तुम हो पति,
परमेश्वर तुम हो ।'
घुट–घुट कर मर गया एशिया
यह दुर्भाग्य रहा सदियो का ।
यह दुर्भाग्य रहा देवो का ।
यह दुर्भाग्य रहा मानव ।
उत्पीड़न मे
रोज सुबुकियाँ
भर भर रोता रहा एशिया !
दया फटक कर पास न आई
सोना था साम्राज्यवाद का ।
चाँदी थी साम्राज्यवाद की ।

आधी दुनियाँ

लोहा और कोयला मिलकर
रूई और अन्न से मिलकर,
भाग्य सजाया पश्चिम का ही–
कच्चे को पक्का ही भाया
पक्के की थी अद्भुत माया।
बना रहा हैवान सदा भगवान
इसी साम्राज्यवाद का।
उपनिवेश की माया फैली,
खुली हवा में श्रम की थैली।
काम जुटाया
रात-दिवस
पर, दाम न आया।
और
पेट पर पत्थर बाँधे
रहा एशिया
महा-एशिया।
कोड़े पड़े, सख्त चमड़ी
गीली होकर,
पिलपिली हुई,
श्रम अकड़ गया।
फिर लाल हुआ,
बस, लाल हुआ।

बस, लाल हुआ !
भूखे मुँह पर
गम खाने की थी मुहर पडी
मछली तडपी,
पर जल न मिला ।
पश्चिम का बनिया नही हिला ।
तब रक्त बहा
सारा पानी फिर लाल हुआ ।
बस लाल हुआ !
हाँ लाल हुआ ।।

× × × ×

अँधकार मे फेक दिया था दीप बुझाकर ।
और मरा इसान यही डकरा–डकरा कर !
मुर्दो को दी दावत युग ने मौत बुलाकर ।
काट दिये विश्राम, तमन्ना वही सुलाकर !
सभ्य बड़े कहलाते थे,
ये चोर उचक्के ।
मुट्ठी भर थे आए पापी ।
पक–पक कर ये लाल हुए थे !
जीवन का उल्लास इन्होने बाँट लिया था ।
अरबो प्राण रहे थे इनके चाकर बनकर ।
ऊपर राजा, जमीदार, फिर नीचे कमकर ।।

आधी दुनियाँ

× × × ×

अब हालत कुछ बदल गई है।

× × × ×

हर गुजरता दिन व्यवस्थित
और दृढतर हो रहा है एशिया का।
रूस ने जीती लडाई जिन्दगी की
और पिछले युद्ध मे जब
जर्मनी, जापान, इटली ने
करारी हार खाई,
साथ ही कमजोर होकर
लडखडाया फ्रास के सग
दैत्य सा बर्तानियाँ भी।
"उपनिवेशो ने घडी पहचान ली तब।"
फिर नए स्वातंत्र्य का सग्राम
लेकर बढ गया था,
एशिया मे चीन।
वियतनम ने शान रक्खी एशिया की।
और इडोनीजिया, बर्मा, फिलीपाइन,
मलाया, शाम, भारत, देश नव जापान ने
मिल पग बढाए, क्रान्ति का ले शख फूँका!

और सचमुच, हर गुजरता दिन,
व्यवस्थित और दृढतर हो रहा है एशिया का !
जिन्दगी की यह लडाई एशिया की
जीतती ही जा रही है समय का बल,
अब पुराना ही नया बन जागता है,
रक्त मे डूबा हुआ था कोरिया पर,
एशिया को छोड गोरा भागता है !
नई दुनियाँ के फिरगी,
स्तब्ध है, निश्चेष्ट है !
देखते है आँख फाडे,
जानते है, शाति की ताकत बडी है;
लोक-बल जीता रहेगा !
जीत की आई घडी है !
एशिया की यह लडाई,
एशिया ने ही लड़ी है !!

उर्वर धरा की कविता

स्वप्न-कविता !
क्षमा करना,
मै तुम्हारे सस्कारो की पुरानी बात को,
कुछ क्रान्तिकारी रूप देना चाहता हूँ !
आज ब्रह्मा की निकटता का
विषैला मोह तुम अब छोड दो
आज घनतम के तुम्हे ही खोलने है द्वार !
और जनमन को दिलाने है वही अधिकार
जिनसे चेतना उभरे !
तथा--
कुछ प्राण भी निखरे !
मृत हुए सामन्त,
पूँजीपति न होगे !
अब नए मजदूर कविता के बने आधार !
आज घनतम के तुम्हे ही खोलने है द्वार !!
नित नए व्यवधान का प्रतिवाद भी तो चाहिए !
अब पुरानी बात का अपवाद भी तो चाहिए !
आज धरती की छिली छाती,
हरे है घाव,

कविते !
अब तुम्हारे हाथ से
उर्वर धरा फिर से बनाने,
जिन्दगी के हास को ऊँचा उठाने,
सच (?)
नई कुछ खाद भी तो चाहिए !
होगई काली कला,
श्रृगार के जलने जलाने से !
घुट गई तू खुद,
निरा धूआ उठाने से !
आज मानस जागता है
हृदय का रस माँगता है,
किन्तु, पीने को नया
आह्लाद भी तो चाहिए !
सत्य को अब परखने की
है कसौटी एक,
हो जुबाँ पर
'कर गुजरने की' नई सी !
आड पिछडी व्यवस्था की,
दे सकेगी कुछ सहारा
शक मुझे है !
जा रही हो कब्र मे,

उर्वर धरा की कविता

जिन्दा जवानी मे !
भय इसी का आज तो है !
साजिशो की पोल
खुलने को हुई है !
आज,
जनमत
शक्तिशाली हो रहा है,
और तुम,
निज सस्कारो की
पुरानी बात करती जा रही हो !
टूट कर,
टुकडे हुए
साँचे पुराने–
और तुम हो,
जो कि–
उनमे आज ढलती जा रही हो ?
यही तो दुख खा रहा है,
भय इसी का आज तो है !
अब प्रयोगो की नई तलवार लेकर
काट दे वे अङ्ग
जो अब सड चुके है !
और दे सम्मान उनको

जो अभी कुर्बानियाँ दे,
शान्ति के हित लड चुके है
अब विरोधी मोर्चे मे
कूद पड़ तू !
दे सहारा जिन्दगी को फिर नया तू !
लोक–सस्कृति की तरगो के सहारे,
आज सागर फिर तुम्हारा
कर सके उद्दाम गति से गर्जना
कुछ तीव्र,
फिर कुछ मद,
फिर कुछ शान्त होकर !
कवि,
न खो जाए–
कही उद्भ्रान्त होकर !!
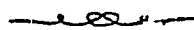
न्याय की आँख

दीर्घकाल की
पराधीनता के पश्चात्
जब कभी हमने
अनुभव किया कि
हम स्वतत्र है ।
इस स्वतत्रता की रक्षा,
इसकी उन्नति
औ प्रगति
हमारा मूल मत्र है,
तब से प्रण तो अगणित बाँधे,
सपनो के प्रासादा गगन–चुम्बी रच डाले,
किन्तु न थामे
आँसू उस भोले जनमन के,
पीडाओ से भरे भूख के
फूट रहे है, अब भी छाले ।।

कब बाँधे, कब थामे आँसू,
कब काटे अधी आँखो पर
पडे हुए ये कलुषित जाले ?

उमङ्ग

मानवता की
नई भावना का प्रतीक
यह देश कहाता ।
नई प्रेरणाओ की प्रतिनिधि अब
बनी हुई है भारतमाता !
आर्थिक न्याय,
और सामाजिक
क्रान्ति यहाँ का स्वप्न शेष है,
सविधान मे अंकित है आदर्श हमारे !
व्रत सेवा का,
देशोन्नति का,
तन-मन-धन अर्पण करने का,
लिया हमी ने ।
किन्तु बताओ,
सत्य-निष्ठ कब सिद्ध हुए
हम अपने व्रत मे ?
उषाकाल को देख
नया इतिहास उठा था ।
आवाहन था,
उसकी भी नूतन साँसो मे !
कभी सहस्रो वर्ष पूर्व,
जो शुरू हुई थी अमर कहानी,

न्याय की आँख

वही आज
कहती है आग लगा बाँसो मे
भाग्य आपदामय है अब भी
नए दौर को
फिर से हम कब शुरू करे
यह निर्णय तो अब करना होगा !
कहते थे मजिल समाप्त है,
किन्तु बताओ,
सफर कहाँ तक कर डाला है ?
शाति, अहिसा का प्रकाश
बापू ने देखा ।
किन्तु शान्ति,
क्यो बनी कब्र की शान्ति आज है ?
कौन माँगता,
मूल दिखाकर नया व्याज है ?
माना, नही अहिसा बुजदिल की प्रिय थाती,
किन्तु सत्य की
युग–बाती को
कौन जलाकर राख कर रहा ?
कौन घृणा करता अपनो से ?
कौन उचित साधन से
लक्ष्य साधने की

उमङ्ग

प्रिय बात बताकर,

भूल रहा

बुनियादी पाठ स्वय युग–युग का ?

सच कहना

अब आँख मूँदकर

जगा हुआ भी, कौन सो रहा ?

मेघ आया

बीज मे थी पुण्य अभिलाषा हृदय की,
व्योम से नीचे उतर कर मेघ आया ।
पवन ने स्वर-साधना की, गुनगुनाया--
'मेघ आया ! मेघ आया !! मेघ आया !!!
मेघ, वह जो. नीर और समीर बाँधे--
आग मे धूँआ लपेटे,
बिजलियो के साथ अभिनय कर रहा था !
स्वय पृथ्वी पुलक बोली--
"सोम से पर्जन्य,
जर्जर अङ्ग के आधार
अमृत-सेतु से, हे जनपदो के प्राण !
सौ-सौ बार ले आशीष !
अब तू रस-निसिचन से हमारी
देह शीतल कर,
सदा अङ्गार सी जो जल रही है !"
"शोषको की दास बनकर रह चुकी हूँ,
किन्तु भोली आस हूँ कृपि-देवता की !
मेघ ! तू कृपि का प्रवर्तक,
प्रीति का सुख,
लोचनो से पिया जाता--

अन्न पर लिखता ऋचाएँ !
और निज अस्तित्व देकर,
अश्रु मे भी मुस्कुराता !
काव्य रचता—
धूल से वेष्टित कठिनतम,
रजकणो से मिल, धरा का रूप भरता !"
तडपती सौदामिनी उन्मादिनी सी
मेघ मे जो—
वह धरा पर कोपलो मे आ समाई !
फूल के मिस, खिलखिलाकर प्रीतिशाखा,
अक भर–भर, गले मिलकर कसमसाई !!
बीज मे थी पुण्य अभिलाषा धरा की,
व्योम मे चढ मेघ फिर आया धरा पर,
मेघ, वह जो, नीर और समीर बाँधे,
आग मे धूँआ लपेटे,
बिजलियो के साथ नर्तन कर रहा था !
पवन ने स्वर-साधना की, गीत गाया—
"मेघ आया ! मेघ आया !! मेघ आया !!

एशिया बनाम भारत—

निष्प्रभ,
किन्तु पुन ओजस्वी,
आज एशिया के नयनो मे
जाग्रति की ले रक्तिम आभा,
नव-प्रकाश फिर जाग रहा है।
फैल चुका है
पूरब मे तो इतना ज्यादा घना
कि पश्चिम का 'घनतम'
घबरा उट्ठा है।।
आज हमे भी दिव्य—दृष्टि मिल रही
आँधियो की पागल, बेचैन गूँज मे।
पतितो के पग तले,
धरा फिर डोल रही है,
क्योकि रोशनी मिलते ही,
जनता अपनी उन्मनी नीद मे
डूबी आँखे,
हठयोगी मुद्रा को तजकर,
धीरे धीरे खोल रही है।।
चुँधियाती तो वे आँखे,
जिन पर चर्बी है खूब चढ रही।

उमङ्ग

पूँजी की काली छोटी
गर्दन पर देखो,
मोटी थूथन आज बढ रही !
अब तो व्याधि कीट फैले है,
यह धरती अस्वस्थ हो रही।
दिवा—भीत उल्लू तो अब भी
नयन खुले रखते है,
लेकिन देख न सकते !
उन्हे क्या पता ?
नव-प्रकाश, जब
आँखो के चेतन अपाङ्ग के
दूर   किनारो तक
भरता तो,
कितना स्पष्ट, साफ दिखता है ?
अब नई प्रभाती पुन उठी है,
याम-तूर्य का स्वर दबोचकर !
तार—तार फिर मिजराव चला है देखो,
दिल का साज झनझनाता है !
प्राणो मे श्रुतियाँ जागी है !
लोकवाद की नई शक्ति ले,
पापो का घट जल्दी से जल्दी रीतेगा ! !
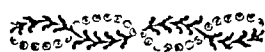
संघर्षों का आह्वान

सघर्ष का आह्वान करने की चुनौती
आज भी स्वीकार है।
देखता हूँ, कौन मेरी
चेतना का छीनता अधिकार है।
ये नगे सुकुमार वन्धन जिन्दगी के
कौन कहता है कि काँटे चुभ रहे हैं ?
आज काँटे साफ है,
उर्वर धरा है,
कल्पना के वीज नूतन उग रहे है।
युग,
धरा का अब नया चेहरा वनाने आ रहा है।
स्वप्न-कविता को उजाला खा रहा है !
जागती अनगिनत आँखे,
अव अँधेरा मिट चुका है !
आज शोषण लडखडाकर
गिर रहा है, पिट रहा है !
सर्वहारा,
आज अगुआ वन रहा है।
लड रहा है जान की वाजी लगाकर,
प्रेरणा है दे रही कुर्बानियाँ,

उमङ्ग

व्यक्ति को,
कलुषित निराशा खा रही है !
लोक-जीवन बीच आशा आ रही है ।
गति नई निर्बन्ध है,
सप्राण है !
भागता है अब नही
विक्षिप्त सा रोमान्स जीवन का,
स्वस्थ है अनुभूति,
स्वर भी मुक्त है
खुल रहे है कठ
जन–जन को जगाने को––
झूमती है, तर्ज मेरे
गीत की, स्वर लहरियो की,
देखते क्या नही,
अब है 'प्राण' आने को ?
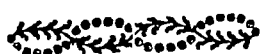
घुटन

गीत मत गा,
रागिनी बेचैन है ।
स्वर जरा पहचान,
कितना रुग्ण है ?
मीड को तडपन मिली है जन्म से ।
तू तडप,
यदि दर्द है दिल मे कही ।
आज नभ की नीलिमा मे,
कल्पना की साजिशे है ।
चाँद तारे हो रहे गद्दार ।
ये गरीबी से न करते प्यार ।
इसी से तो टूटते है रातभर,
चाँद भी घटता रहा है,
जब कभी,
आँसू लिए
करुणा कलेजा—फाडती है ।
शीत ज्वर सा हड्डियो मे कँपकपाता ।
कांपते है, आँख मे ये लाल डोरे
पलक पर कुछ श्वेत उठते फेन से है,
अँगुलियो मे तार ना कुछ झनझनाना

उमङ्ग

रक्त से उठ भाप है बादल बनाती
नयन के पथ से घटाएँ घिरी आती
अधर चुप है,
निकलते कुछ भी न मुख से बयन है,
दीप सी बुझती चली अब रैन है,
गीत मत गा, रागिनी बेचैन है !!

नई चेतना

न्याय जहाँ से मिले,
खीच लो बल पूर्वक अब,
वरना पौरुष-हीन कहेगी हमें पीढियाँ।
जब तक वायु-लहरियाँ टकराले कूलो से,
तब तक हम कुछ और प्रतीक्षा कर लेते है।
दिल में यदि निर्धूम अग्नि की ज्वाला उठती,
तो कुछ कर दिखलाना होगा।
देख रहे हो नही आज,
झंझा का पूर्वाभास,
स्वच्छ रह-रह कर दिल मे,
कुछ विचित्र सी आशकाएँ पैदा करता?
ऐसा लगता,
अखिल विश्व धूमायित होना बंद हुआ है
शेष रहा है, आज धधकना अरमानो का।
किन्तु अकेला चना कभी क्या,
फोड सका है भाड कुमति का?
अनुनय विनय नही होगा अब,
प्राणो की बलि देनी होगी
जब तक वायु लहरियाँ टकराले कूलों से—

नई चेतना

तब तक हम कुछ और प्रतीक्षा करलेते है।
सयत भाषा की आशा मत करो,
जब कि हम भूखो मरते,
फिर भी, हम है सावधान
इसलिए कि
जलता और उबलता खून,
कही उत्तेजक बनकर
बने न कारण सर्वनाश का।
इसलिए गांभीर्य हमारा
दुरधिगम्य है जन-समुद्र सा !
जन-समुद्र भी वही
जिसे अब जला न सकते,
आँखो से झडते स्फुलिग सामन्ती-युग के।
और भला क्या नीली आखे युग-वणिको की,
व्योम-नीलिमा सी जाग्रति को निगल सकी है ?
रुद्धवीर्य इस काल-सर्प सी
सोती जनता को अब फिर से
तप्त-वायु ने जगा दिया है !
अब उसकी फुत्कार भयंकर डरा रही है
धनमद मे बेहोश किसी की मुस्कानो को !
आर्द्र घने केशो मे अपनी डाल अँगुलियाँ,
सद्य स्नात खड़ी

नई चेतना

युग-तट पर नई चेतना ।
सोच रही है जाने क्या-क्या ।
खंजन चटुल नयन में उनके नवोल्लास है ।
नव विकास है,
नवल स्फूर्ति है ।
पाटल-शोण अधर पर उसके सरल हास है ।
किन्तु सुखों की मदिर मधुरिमा पर
क्षण-क्षण मिट जाने वालो,
सावधान,
यह खड़ी हुई है, बहुत सम्हल कर,
छूते ही गल जाय न सत्ता थोथे युग की ।
सुनो-सुनो,
वह कौन कर रही आज घोषणा,
मेघों के गम्भीर स्वरों में,
'भावी जीत हमारी होगी ।'
सौदामिनि सी कौन चमक कर
कहती जाती घनी घटा में,
'भावी जीत हमारी होगी ।'
अग्रदूत हम नई विजय के,
ले स्वतन्त्र संघटन हमारी बुद्धि आ रही,
तोड़ भित्तियाँ असफलता की
वर्षों से संचित कटुता की मूर्त-भावना,

नई चेतना

ले अभाव की छिपी उदासी,
झूल रही है,
राजनीति की शब्द डोर मे।
अर्थनीति का कुटिल भुजगी,
जब तक डसना नही छोडदे,
तब तक,
हम भी मन-वीणा पर,
मधुर रागिनी कैसे छेडे ?

स्वतन्त्रता का मूल्य

क्या एक बार भी दिल मे होता यह विचार ?
हम कौन ? कहाँ के राही है ?
उत्तरदायित्व हमारा क्या ?
क्यो डूब रहे हम निराधार ?
पर, एक बार दिल मे न हुआ इतना विचार ?

× × ×

पतवार हमारी नूतन है,
पर शक्ति नही है, इतनी भी—
हाथो को थोड़ा तोल सके ।
हिम्मत करके अन्यायी के सम्मुख तो थोडा बोल सके ।
तूफानो को ललकार सके,
अपने प्राणो का छोड मोह
निजप्रियता को दुत्कार सके ।
क्यो नही, सम्मलित शक्ति लिए,
हम द्रुतगति से हो जाएँ पार ।
पर, एक बार दिल मे न हुआ इतना बिचार ।

× × ×

हम स्वतत्रता पा,
स्वतन्त्रता का मूल्य नही क्यो आँक सके ?

स्वतन्त्र का मूल्य

क्यो नही हृदय मे
छिपी कलुषता को भीतर से झाँक सके ?
यह सत्य कि कुछ तो लोलुप है।
पर, हम भी तो कुछ कर न सके !
हम, जो ईमान विछाते है,
अँगुली से दोष वताते है
निज दोषों से ऊपर उठ हम
अपना रीतापन भर न सके !
पर्दा जो पडा आँख पर है,
वह उठा नही है,
बोझिल है !
हम पर भी ऋण है माता का,
पर बड़ा निकम्मा यह दिल है !
ऊपर मुंह करके थूक रहे,
परिणाम स्वय को पता नही,
हर वार विवशता को समेट,
अपनी ढपली का फोड़ चाम,
अपने रागों को ही लपेट,
कुढते रहते, हो रहे ख्वार !
पर एक वार दिल मे न हुआ इतना विचार !
हम कौन ? कहाँ के राही है ?
उत्तरदायित्व हमारा क्या ?

क्यो डूब रहे हम निराधार ?

×

जनता विश्वास खो रही है
उसको तुम भेड़ समझना मत,
वह मार्ग देखकर चलती है।
शासक शासित तो बेलगाम,
आपस मे कीच उछलती है।
पर इसका भी तो हो उपाय,
जिससे हम समझ सके खुद को !
खुल जायँ विषमता के
गर्हित सब बद द्वार।
पर, एक बार दिल मे न हुआ इतना विचार,
हम कौन ? कहाँ के राही है ?
उत्तरदायित्व हमारा क्या ?
क्यो डूब रहे हम बीचधार,
बस, एक बार तो दिल मे इतना हो विचार !

सैनाणी

सैनाण पड्यो हथलेवै रो, हिंगलू माथै मै दमकै ही।
रखड़ी फेरां री आण लिया गमगमाट करती गमकै ही।।
काँगण-डोरो पौचै माँही, चुडलो सुहाग ले सुघडाई।
चुदड़ी रो रंग न छूट्यो हो, था बँध्या रह्या बिछिया थांई।।

अरमाण सुहाग-रात रा ले, क्षत्राणी महलाँ मै आई।
ठमकै सू ठुमक-ठुमक छम-छम, चढगी महलाँ मै शरमाई।।
पोढण री अमर लियां आशा, प्यासा नैणा मै लिया हेत।
चूडावत गँठजोडो खोल्यो, तन-मन री सुध-बुध अमिट मेट।।

पण बाज रही थी शहनाई, महला मै गूज्यो शखनाद।
अधराँ पर अधर झुक्या रहग्या, सरदार भूलग्यो आलिङ्गन।।
रजपूती मुख पीळो पडग्यो, बोल्यो, "रण मै नहि जाऊला।
राणी ! थारी पलका सहळा, हूँ गीत हेत रा गाऊँला।।"

"आ बात उचित है की हद तक, ब्या मै भी चैन न ले पाऊँ?
मेवाड़ भलई क्यू हो न दास, हूँ रण मै लडन नही जाऊँ।"
बोली क्षत्राणी, "नाथ ! आज थे मती पधारो रण मांही।
तलवार बताद्यो, हूँ जासू, थे चुडी पैर रैवो घर माँही।।"

कह, कूद पडी झट सेज त्याग, नैणा मैं अगणी झमक उठी ।
चडी रो रूप बण्यो छिण मैं, बिकराळ भवानी भभक उठी ।।
बोली, "आ वात जचै कोनी, पति नै चाहू मैं मरवाणो ।
पति म्हारो कोमळ कूपळ सो, फूला सो छिण मैं मुरझाणो ।।

पैल्या की समझ नही आई, पागल सो बैठ्यो रह्यो मूर्ख ।
पण वात समझ मै जद आई, होगया नैण इकदम्म सुर्ख ।।
बिजळी सी चाली रग-रग मैं, कव्वच बाँध्या उतर्‌यो पोडी ।
हुङ्कार "वम-बम महादेव", "ठक-ठक-ठक-ठपक" बढी घोडी ।।

पैल्याँ राणी नै हरख हुयो, पण फेर ज्यान सी निकळ गई ।
कालजो मूह कानी आयो, डब-डब आँखडिया पथर गई ।।
उन्मत सी भाजी महला मैं, फिर बीच झरोखा टिक्या नैण ।
बारै दरवाजै चूडावत, उच्चार रह्यो थो बीर-बैण ।।

आँख्या सू आँख मिली छिण मैं, सरदार बीरता बिसराई ।
सेवक नै भेज रावळै मैं, अन्तिम सैनाणी मँगवाई ।।
सेवक पहुँच्यो अन्त पुर मे, राणी सू माँगी सैनाणी ।
राणी सहमी फिर गरज उठी, बोली, "कहदे मरगी राणी ।।"

फिर कह्यो, "ठहर ! ले सैनाणी", कह झपट खड्ग खीच्यो भारी ।
सिर कट्यो हाथ मे उछळ पड्यो, सेवक भाज्यो ले सैनाणी ।।
सरदार ऊछळ्यो घोड़ी पर, बोल्यो, "ल्या-ल्या-ल्या सैनाणी ।"
फिर देख्यो कट्यो शीश हँसतो, बोल्यो, "राणी । मेरी राणी ।"

"तू भली सैनाणी दी राणी ! है धन्य धन्य तू क्षत्राणी ।
हूँ भूल चुक्यो हो रग-पथ नै, तू भलो पाठ दीन्यो राणी ।।"
कह एड लगाई घोड़ी कै, रण बीच भयङ्कर हुयो नाद ।
केहरी करी गर्जन भारी, अरिगण रै ऊपर पडी गाज ।।

फिर कट्यो शीश गळ मै धार्यो, बेणी रो दो लट बॉट बळी ।
उन्मत्त बण्यो फिर.करद धार, असपत्त फौज नै खूब दळी ।।
सरदार विजय पाई रण मै, सारी जगती बोली, "जय हो ।"
"रण-देवी हाडी राणी री, मॉ भारत री जय हो, जय हो ।।"

हिरौल

ढळकत ढळकत ढळता सूरज, मुळकत ऊँचो आज्या रे !
राजस्थान देखले जी भर, मरण-त्युहार मनाज्या रे !!
तारॉ छाई राता मैं ओ चॉदडला मुस्काज्या रे !
राजस्थान देखले जी भर, माथै रेत लगाज्या रे !!

सुणो वीर भू बात सुणावै, आँसूडा मत ल्याइयो रे !
नित बलिदान जठै अँगडावै, वा रज मती लजाइयो रे !!
अम्बर ऊपर, धरती नीचै, वीराँ पर बलि ज्यावै है !
बीचो बीच खडयो अन्ताळो, गढ ऑख्या भर ल्यावै है !!

ऊँचा कोट, कँगूरा ऊँचा, पण गुलाम वण जीवै है !
रात-रात घुळ-घुळ घबरावै, खारा ऑसू पीवै है !!
देखणियै रो हियडो रोवै, कूण सुणै फरियाद करै !
कितणा बरस बीत चाल्या पण बैरी, कद आजाद करै ?

एक दिवस क्षत्र्यॉ मै वाद बढ्यो, फिर नयो सवाल उठयो !
कुण हिरौल पद अब कै लेसी, किण पर मरण त्युँहार चढयो ?
शक्तावत चूडावत दो दळ, मन मै खायो खार घणो—
सिर देवण कुण आगै आवै, बात उठाई जणो-जणो !

क्षत्री नै तो मरणो मङ्गल, राजस्थानी आण इसी–
प्रथम जिकै नै देश बुलावै, इसी भाग मै शान किसी ?
राणा बोल्या अन्ताळै मै, पैल्याँ जो भी जावैलो–
वो ही दळ हिरौल पद पावै, मरचो सुरग मै पावैलो ।।

कहणै मै थी देर, बल्लजी शक्तावत हुङ्कार करी !
सालुम्ब्रा सरदार दूसरा, नैणा मै चिणगार भरी ।
मूछा पर दे ताव, भृकुटियाँ चढी, कवच कडकडा उठ्या –
रोम-रोम करणाया, भारी भुजदंड भी फडफडा उठ्या ।।

गरज्या सिंह समान, लाल डोरा नैणा रा तरणाया ।
कट्या होठ, दाँत भी पीस्या, नस-नस रा स्वर झरणाया ।।
भीमकाय गढ आगै हो, दरवाजो तीखै सेलाँ रो ।
शक्तावत हाथी चढ धायो, जायो थो रणहेलाँ रो ।।

चूडावत सरदार, लिया निसरणी, ऊँची भीत चढ्यो ।
वार मोकळा लियाँ ढाल पर, बैर्याँ आगै डट्यो रह्यो ।।
शक्तावत रो हाथी तीखै सेलासू घबरावै हो –
टक्कर खा खा, घायल हो-हो, पाछो सरक्यो जावै हो ।।

सालुम्बा-सरदार कोट कै कंगूरा पर चढ धायो ।
वैरी झट तलवार खीच के वार कर्यो, सिर गरणायो ! ।
चक्कर खा के पड्यो भीत पर, दुश्मण फिर दो टूककर्या ,
शक्तावत सरदार फौज सँग, डट्यो द्वार पर हूक भर्या ?

देख्यो, अब यू पार पडै नहि, प्राणा री वलि देणी है ;
हाथ लगी, वाजी क्यू छोडू ? पहली पदवी लेणी है !!
इतणै मै रण-भेरी बाजी, वल्ल करी गर्जन भारी !
सेला सू अड़के यू बोल्यो, वीरो ! अब मेरी वारी !!

हाथी स टक्कर लगवाओ, दरवाजै न चूर करो !
मेरी चिन्ता मती करो थे, फर्ज करण सूँ नही डरो !!

वीर सहमग्या, वल्ल न मान्यो, म्हावत हाथी बढा दियो !
कीलाँ आगै खडयै वीर पर, हाथी मस्तक भिडा दियो !!
कड़कड़ाट कर द्वार टूटग्यो, बिध्यो वल्लजी सेलाँ सू –
सालुम्बै री ल्हास किलै मै, मिली पडी पण पैल्या सू !!

ढळकत ढळकत ढळता सूरज, मुळकत ऊँचो आज्या रे !
राजस्थान देखले जी भर, मरण-त्यूँहार मनाज्या रे !!
ताराँ छाई रातडली मै, चाँदडला मुस्काज्या रे !
राजस्थान देखले जी भर, माथै रेत लगाज्या रे !!

आण री बात

आज नयो प्रण धरती लेसी, बहना मंगळ गावैली ।
गूज उठी वीरां री वाणी, मारू राग सुहावैली !!
बिन बलिदान कठै आजादी, लेल्यो प्राण हथेळी मे ।
विजय बॉध सिरपेच मुडाला, प्रिया उडीकै देळी मै ।।

राणाजी राणी सू बोल्या, स्वतत्रता अब जावै है ।
जल्दी करदे बिदा म्हनै तू, धरती आज बुलावै है ।।
रोम रोम करणावै मेरो, भालो हाथ उठावै है–
म्याना सू तलवार नीसरै, मूछ मरोडा खावै है !।

रणदेवी सी राणी बोली, मै भी रण मै जाऊँली ।
धरती री जो लाज उघाडै, वीनै मजो चखाऊँली ।।
राणा मूछमरोड़ तणचा, घोड़ी पर चढ्या लगाम धरी ।
झूमझूम हुकार उठाती, फौज घटा सी चाल पडी !।

राणाजी जद चेटक चढ़कै, आया हल्दी घाटी मे ।
कट-कट के सिर धड सू न्यारा होके मिलग्या माटी मै !।
मार्नासिह हाथी पर चढके, राणैजी पर वार कर्‍यो ।
चेटक पजा टेक सूड पर, राणैजी नै त्यार कर्‍यो !!

आण री वात

पण कायर होदै मे लुकग्यो, बर्छी रहगी मुह वायाँ ।
देश कपूत जाय शरमायो, पडै न इसड़ैरी छ या ।।

चेटक जान गँवादी, जान बचादी वीर प्रताप री ।
साथ छुट्यो वीरा रो, राणो जान लुकावै आपरी ।।
रात-रात बन भटकै, नीद न आवै, बैरण हाय रे ।
राणा आँसू पीवै, विलखै बाळकियाँ री माय रे ।।

नाना टाबर सुबक्याँ लेवै, मिलै न रोटी खावण नै ।
रोता-रोता ही सो जावै, तुणका मिलै बिछावण नै !!
देख दुर्दशा राणै री, इसडो कुण है जो हिलै नही !
देख हिमालय! तेज वीर रो, तूभी क्यू अब गळै नही !!

एक अँधेरी साँझ पडग्या, जद वन बिलाव रोटी लेग्यो !
फूल जिसी कँवळी काया नै, भूख और आँसू देग्यो !!
राणै रो हियड़ो तद रोयो, वज्जर री पिघळी छाती ।
ममता आगै मान झुकायो, अकबर नै लिखदी पाती ।।

पण कवि पिरथी वात पलटदी, लिखी आणीरी वात वडी ।
अकबर रहग्यो हाथ मसळतो, शाही सेना भाग पडी !!

कोडमदे

दळ बादळ उमड्यो हेल्या रो, लश्कर थाम्यो भी थमै नही ।
कँवरी रा मँहदी रँग-राता, डग मग पर डिगता जमै नही ॥
धीमै-धीमै हळवा-हळवा, सपना रो दिवलो सँजोया—
चाली कोडमदे नैण भर्या, दुविधा मैं अपणी सुध खोया ॥

सादूल बाँध मीठा सुपना, उजळी रजणी नै याद करै ।
साथ्या रो साथ कदै लेवै, पुणि कदै लार नै कदम धरै ॥
बाबल रो हियो भर्यो आयो, नैणा मै समदर सो उमड्यो ।
कालै डूगर री धरणी पर, कुण बिरह वादळी ले धुमड्यो ॥

ममता री तणिया सी खीचै, भीजै पलका होवै गळगळ ।
सिरकै, थिरकै, हिरखै मन मै, उळझै गठ-बन्धन मै पल-पल ॥
घर नै सूनो-सूनो छोड्याँ, पाख्याँ पसार चिडकोली जा ।
फिर आणै री आसा बिसार, मुख मोडया या कुण जा, कुणजा?

ओळ्यू रासुर धीमा पडग्या, डोली पूगळ कानी चाली ।
सिझ्या भुरसुटिया मै लुक-छिप, ल्याई दुख री रजणी काळी ॥
डगमग-डगमग डोलै डोली, हलवा हलवा चालै डोली ।
दोना रै हियडै हूक उठै, पण दोउ मुख निकलै ना बोली ॥

ज्यूं होठ हिलै, त्यूं सांस चलै, फिर हाथ बढै, धडकै छाती ।
शरमाणै री है बात किसी, जद इक-दूजै रा म्हे साथी ।।
सूनै मारग पर चॉद ऊग, रजणी रो अँधियारो धोवै ।
डोली आगै, दॉये-बॉये, सादूळ साथियॉ नै जोवै ।।

ज्यूं चॉद चाँदणी लिया सग, नभ कै हारा मे राज रह्यो ।
सादूळ लियॉ कोडमदे नै, साथ्यो मै वैसो साज रह्यो ।।
इतणै मै सूनै मारग पर, ठक-ठक टाप सुण्या भारी ।
ऑख्या रा डोरा लाल कर्‌यॉ, रतनारा नैण तण्या भारी ।।

नस-नस मै खून जम्यो पिघळ्यो, कडकी विजळी, धडकी छाती ।
कडकड करती टूट पडी, अरडक री सेना मदमाती ।।
लप-लप करती तलवार थाम, सादूळ खड्‌यो हो सावधान ।
रणबाला कमर कस्यॉ निकली, सब छोड लाज ले एक प्राण ।।

सुण शखनाद, गज चिघाड्‌या, हय हीस्या म्याना खिची खड्ग ।
तडपी विजळी सी नस-नस मै, छोड्‌यो बका विकराळ जङ्ग ।।
बण महाकाळ भिडग्या भैरव, गरज्या आपस मै ठोक ताल ।
भाला सू खीची खाल-खाल, तीरा सू बीध्या बाळ-बाळ ।।

लोहू-लुहाण, चलती कृपाण, चमकी ले छीटा लाल-लाल ।
मदमत वीरा धर रुद्र-रूप, डाटी तलवारा अडा ढाल ।।
असवार पड्या खा-खा पछाड, ली भेट भवानी रुण्डमाळ ।
झट शीश कट्यो आई भुवाळ, धड पड्यो धरा पर खा उछाळ ।।

बादळ गाज्यो अम्बर कॉप्यो, फिर एक बार हुङ्कार उठी ।
वर और वधू कै हाथो मै, प्रलयङ्कारी तलवार उठी ।।
खुल दूर पड्यो कागण-डोरो, बह्ग्यो सिन्दूर पसीनै मै—
मेंदी रा हाथ कटारी ले, चलग्या कितणा कै सीनै मै ।।

सादूळ और अरडक दोन्यू, लड-लड के थक-थक हुया चूर ।
दोन्यू था कुळ की आण लियॉ, रण मै बॉका मदमत्त चूर ।।
इतणै मै बिजळी सी चमकी, बस ऑख झपी, तलवार चली ।
सादूल हुयो, दो टूक, शीश जा पड्यो दूर, फौजा मचळी ।।

लुटग्यो सुहाग रणदेवी रो, पण एक नही ऑसू ढळक्यो ।
गमगमाट करतो मुख सुन्दर ज्यू भोर हुई, त्यू-त्यू भलक्यो ।।
ले शीश गोद मै, चिता सजा, जा बैठी "शिव-हर-हर" करती ।
वळि खडग खीचली हाथ वढा, चुचकारी वार-वार धरती ।।

बोली, "बाबल हो दान कर्‌यो, पति नै यो हाथ, हाथ मै ले।
पण, पिया जा वस्यो दूर देश, के करल्यू हाथ साथ मै ले ।।
सासू डयोढी पर खडी-खडी, मग जोती होसी आँख लगा—
मेरी मरवण, घर की राणी, तू बेगी आज्या पाँख लगा ।।

जा हाथ, सास रै घर तू जा, कह खडग चलाई एक बार।
नान्हो सो गोरो हाथ दूर जा पड्‌यो, खून री बही धार ।।
पुणि लाल-लाल आँख्या फेरी, सेवक नै बोली, "चला खड्‌ग ।"
"दे काट हाथ दूजो मेरो, मत देर करै, क्यू खड्‌यो दङ्ग।।"

कह झटपट सीधो कर्‌यो हाथ, पण सेवक नटग्यो नवा माथ।
पुणि गरजी सेवक काट हाथ, बस खड़ग उठी, झट गयो हाथ ।।
दगदग करती छूट पड़ी, लोही की तुर्री लाल-लाल।
यो हाथ भेजदो बापू नै, कहज्यो बाई री ल्यो सम्हाळ ।।

फिर कट्यै शीश कानी देख्यो, चुदडी मैं ढकली बरमाळा।
धक-धक लपटां मैं धधक उठी, भारत री बेटी रण वाला ।।

धरती री लाज

बाँकडली दुर्गा वीरमती, हाथाँ मे तेज कटारी ले !
करडै कव्वच रो साज बाँध, चल पडी मौत री त्यारी ले !!
आँख्या ओज मे भवानी रो, पलका पर भार जवानी रो !
युवती माता रै गौर रूप पर, चढ्यो नूर ज्यू मानी रो !!
गरजी, चिघाडी, कुहुक उठी, सरदार सिपाही भभक उठ्या !
झक-झक करती तलवार लिया, अकबर सेना पर लपक उठ्या !!

दळपत री आण बचावण नै, रजपूती शान दिखावण नै !
मतवाळी दुर्गा सुत समेत, आई रण गाज गिरावण नै !!
तलवार उठी, भुजदण्ड कट्या, धड धडधडाट करता पडग्या !
झट शीश कट्या कुळ वैरया रा, धरती मै खड्या-खड्या रुळग्या !!
आसफखा री काया काँपी, धूजणी छुटी थर-थर्रायो !
पग नीचै धरती डोल गई, पुतळी घूमी, सिर गरणायो !!

इतणै मे वीर नरायण आ, बोल्यो, "मा ! मरण भलो लागै !
निज देश हेतु, द्यू शीश दान, बैरी रो डरअव क्यू लागै !!
माँ आज्ञा दे तूफान उठै, माँ हाथ उठा, आशीष सजा—
माँ तेरो सुत सकळप करै, मगळ गा माँ ले शख बजा !!"
दुर्गा री आँख्याँ लाल-लाल, सुत री सुण वाणी करुण हुई !
छाती सू पूत लगाय लियो, बोली "बेटा ! मै धन्य हुई !!"

धरती की लाज

"नौ मास कूख मैं धर्यो पूत, अब कियाँ भुलाद्यू तनै बता ।
पण भारत माँ जद संकट मैं, तो आज रोकल्यू कियाँ बता ।
जा लाल, देश री लाली मैं, थारो भी लोही लाल मिलै—
ओ सिह देख, इण आँचळ सू, धौळै दूधाँ री धार चलै ।
कहणै मैं देर हुई, पल मैं, नारायण री तलवार उठी !
चमकी बिजळी, भुज फडक उठ्या, होठाँ पर रण-हुकार उठी ।।

सरणाट चल्या विष बुझ्या तीर, खट-खट-खट खड्ग खगार उठी !
बर्छी, भाला, वल्लम, कटार, रण मैं मारू हुकार उठी ।।
माँ दुर्गा री तलवार-धार थी तेज, तेज थो मुख ऊपर ।
आगै सुन, माँ पाछै पाछै, उजळो सो ओज मरण-सुख पर ।।
तेवर पर तेवर चढण लग्या, अम्बर नत-शीश प्रणाम कर्यो !
धरणी धधकी, धूज्या पहाड, गति गमक उठी, विश्राम मर्यो ।।

राणी दुर्गा हाथी सवार, हाथाँ पै थाम्या थी दुधार ।
बोली, हूँ भाग्य न सोवण द्यू, अब जाग पड़ी म्हारी कुठार !!
घमसान लडाई बीच जगी, तलवार भवानी दुर्गा री !
विश्वासघात खुद लरज उठ्यो, खुलगी खिडकी सी सुरगाँ री ।।
इतणै मैं बण बजराक टूक, रण बीच पड्यो बेहोश पूत ।
माँ री बाणी गळगळा उठी, बोली, धन म्हारी आज कूख ।।

मै आज दिवस खातर बेटा, पाळ्यो पोस्यो थारो जीवण !
मै आज बड़ी वड-भागण हूँ, पा लियो प्रसूती रो बडपण !!
रुक, एक बार फिर साँस खीच, दिल धक, होठा सू होठ भीच !
आँसू ने पी पलकाँ उठाय, फिर एक बार तलवार खीच !!
जा कूद पडी रण चण्डी माँ, कट-कट के शीश पड्या धरती !
प्रतिशोध जग्यो, मार्‌या असख्य, ठडी छाती कद हो बळती !!

इतणै मै तीर लग्यो व्रण मै, होगई आँख लोहू लुहाण।
सुन्दर मुखड़ो होग्यो कुरूप, काँपी धरती काँप्या जवान !
दुश्मण अनेक, थोड़ा सुधीर, राणी रै सागै जूझ पड्या।
राणी घिरगी, पण थी सचेत, हथियार चल्या, शर बूझ चल्या !
बैरी भाग्या मदमत हुया, राणी री देह लजावण नै !
कामी कुत्ता लज्जा उघाड़, झपट्या राणी हथियावण नै !!

गज सावधान हो चिंघाड्यो, पाछै भारी नद गरज रह्यो !
राणी हो जाती पार हाय, पण जळ अथाह हो वरज रह्यो !!
क्षत्राणी घायल तीराँ सू, छुटगी अपणै रण वीरा सू—
लथपथ शरीर लोहू लुहाण, विधग्यो तन तीखा तीराँ सू !!
हाथी रो म्हावत हाथा मै, अकुश साध्याँ बढ चल्यो शूर—
राणी झपटी अंकुश थाम्यो, उजळै मुखड़ै पर चढ्यो नूर !!

धरती की लाज

धरणी री लाज वचावण नै, दळपत री आण निभावण नै।
अकुश सीनै मै मार लियो, पशुता रो शीश भुकावण नै।।
होदै मू राणी तिसळ पडी, बन मै करळाया पशुपखी।
राणी बोली रणवीरॉ सू, "ल्यो चाल्यो म्हारो मन पखी।।
वेगा सा चिता सजाओ थे, ओ पावन रक्त बचाओ थे।
ओ तन न हाथ लागण पावै, जल्दी सी आग लगाओ थे।।"

भारत इतिहास बदळनो थो, धरती पर खून उछलनो थो ?
मॉं दुर्गा धक धक धधक उठी, सतवन्ती रो प्रण पळनो थो ??

-

लोरी

दूधो कियाँ पियाऊँ ओ लाल ?
तन्नै कियाँ जियाऊँ ओ लाल ?

मैं कुणबै मे बहू बणी ही,
सासू सुगनी भली घणी ही,
पीस्यो, पोयो, पाणी ल्याती—
मन न धापतो, इतणो खाती,
दूधा न्हाती, पूता फळती,
दही बिलोती, सुख मे पळती,

आज न वै दिन मिलै उधार,
सूख गई आँचल मे धार।
अब सुख आगै बँधगी पाळ,
दूधो किया पियाऊँ ओ लाल ?
तन्नै कियाँ जियाऊँ ओ लाल ?

लोरी

दूध कठै अब तन मे म्हारै ?
मरणो सूझै, जियडो हारै,
अब तक आसा कदै न खोई,
पेट बळ्यो पण कदै न रोई !
काजळ, टीकी, रादा लगाई—
चुडलो पैर्‌यो, चौथ मनाई !

घरा पधार्‌या जद भरतार,
सावण सो उमड्यो ले प्यार,
पण अब चूल्है चढै न दाळ
दूधो किया पियाऊँ ओ लाल ?
तन्नै किया जियाऊँ ओ लाल ?

भूख मरू, आँतडिया धूजै,
कोड्या काँपै, पलका सूजै,
आळो और दिवाळो जोऊँ—
लाल बिलखता मैं कद रोऊँ ?
हाड पडै, गरणावै, बीजै;
आचळ मे बस लोही सीजै ?

हाय गरीबी तू मत हार,
मिनखा री मत पाण उतार।
दाणां रो तो पड़ग्यो काळ,
दूधो कियां पियाऊँ ओ लाल ?
तन्नै किया जियाऊँ ओ लाल ?

मैं जाणू, पति कितो कमावै,
दफ्तर मे तो अफसर खावै !
भूखै रो माथौ गरणावै—
लिखता-लिखता नस तरणावै।
पिडळी कॉपै, घर जद आवै,
कड-कड नळी कडकती जावै-।

कदे न शीश उठै, हे राम !
काम करै पण मिलै न दाम।
मच्यो अँधेरो वांका हाल—
दूधो किया पियाऊँ ओ लाल ?
तन्नै किया जियाऊँ ओ लाल ?

झोरी

आज भँवर मत घरा पधारो,
जोर नहीं भरती रो म्हारो,
म्हनै के दुख, हूँ तो जाऊँ—
धरती नै चेतन कर जाऊँ,
अब तो बिजळी वेगी पड़सी,
मिनखा रा वैरी नै वळसी।

पौ फाटी, आयो परभात,
दुख दर्दां री कटसी रात ?
थेइ सम्हाळो थारो लाल,
दूधो कियां पियाऊँ ओ लाल ?
तनै कियाँ जियाऊँ ओ लाल ?

धरती री पहली बेटी

हळवाँ हळवाँ पूरब मे यो, सूरज उगतो आवै जी ।
काची कँवळी कूपळ शिरके, धरती मौज मनावै जी ।।
मीठी मीठी सौरम आवै, बेल उगे मतवाली जी ।
बोझाँ ऊपर भँवरा भिणकै, झूमै डाळी डाळी जी ।।
अरावली सू फलर फलर या, पवन झकोरा ल्यावै जी !
नदियाँ रस भरपूर जोश मै, धरती झोला खावै जी ।!
राणोजी अब चेटक चढके, आवैला अब घाटी मै ।
कट-कट के सिर धड सू न्यारा, मिल ज्यावेला माटी मै ।।

आज मरण री बेळा आई, धरती रक्त सुहावैली ।
आज वीर माँ-बहन माँग मे, रक्त सिन्दूर चढावैली ।।
जाणै कितना पाप लागसी, रण धरती गरणावै ली ।
जाणै कितणी सरव सुहागण, देवी देव मनावैली ।।
हर हर हर हर महादेव सुण, वैर्‍या री काया डोली !
बाँध कमर तलवार पती नै, वीर भीलणी यू बोली ।!
जाओ म्हारा धरती रा सुख, वीर पती रण मै जाओ ।
जाओ देश बुलावै थानै, आजादी नै घर ल्याओ ।।

धरती री पहली बेटी

जाओ हे रणधीर पिया, पण पाछो पग मत मेली ज्यो !
धन धरती रा वीर लाडला, वार मोकळा झेली ज्यो ।।
भालाँ री थे नोक सामणै, छाती बजर अडा ली ज्यो ।
तलवाराँ री धाराँ नीचै, रमता रमता न्हाली ज्यो ।!
अग-अग सू खून पडैलो, हियो चालणी हो ज्यासी ।
हेलो फिरसी मेवाडै मै, जद म्हारो मन हरषा सी ।।
साथ म्हनै भी ले चालो थे, हूँ तलवार चलाऊँली ।
वैर्‍या रा सिर काट-काट मै, रणचण्डी वण जाऊँली ।।

साथ-साथ रण शैया ऊपर, साजन सजनी जावांला ।
आजादी हित मर ज्याँवाला, धरती स्वर्ग बणावालाँ ।!
थारै विना भँवर जी म्हारो, हियडो मुँह नै आवैलो—
जे थे जाओ बीर एकला, म्हारो मन मर जावै लो ।।
छत्री तो अब जौहर करसी, नार सत्याँ हो जावैली !
पण मरजाद निभार्णा भिलणी, घुट-घुट कर मर जावैली ।।
म्हँनै पिया ! कुण बळवा देसी, कूण सती होवण देसी !
कुण म्हारो दुखडो जाणैलो, सुबक-सुबक रोवण देसी ।!

कुण छाती सू लगा भँवरजी, नीद म्हनै लेवण देसी !
चुडलै रो सिणगार कर्‌याँ कुण, बण-ठणकै रहवण देसी ! ।
सतियाँ तो सत उजलो करसी, कद म्हारो मरणो होसी ।
चढती उमर दुहाग मिलैलो, अणचाह्या करणा होसी--
रात्यू झुर-झुर मर जाऊँली, थारी याद सतावैली ।
बैरण आभा बिजळी ढोला, सारी रात डरावैली--
वीर भील सुण सक्यो न आगे, डब-डब आँख्याँ भर आई--
पण जनणी सी जन्म भूमि री प्रीत हियै मे घिर आई ।।

अग-अग मै बिजली चमकी, नैण तण्या दो रतनारा ।
रण मै चाली रक्त नदी सी, मन मै उजळी सी धारा ।!
मुट्‌ठी मै तलवार चमकती, आँख नही थिर रहवण दी !
होठ कट्‌या लोही सू भरिया, बात नही कुछ कहवण दी !।
थर थर थर थर धूजण लाग्यो, वीर भुजा फडकण लागी !
लोही भरी आँख सू जाणै, लाल लपट लपकण लागी !
बोल्यो भील, 'सुरगी गोरी ! क्यू यह बोल सुणावै तू !
पत्थर सी करडी छाती नै, क्यू अब मोम वणावै तू !!

धरती री पहली बेटी

मरणो आज देश की खातर, राणै पर अहसान नही !
सोरै सॉस प्राण देयूला, इतणो निमळो जाण नही !!
तू चाली तो पग मे म्हारै, घट्टी सी बँध जावैली ।
मौत शीश पर आती आती, दूर घणी बस जावैली ।।
मॉ मॉगली शीशदान तो, हूँ वचणो ही चाऊँला—
प्रिया हेत मै बण्यो बावलो, बार-बार मुड आऊँला ।।
डर है, म्हाने चूक न जाऊँ, शीश कटण री वेला मै ।
जावण दे धण आज एकलो, काल सुणी रण-हेला मै !।

सतियॉ री तू बात जाण दे, वै कद ,थारै पासँग मै !
धरती री ए पहली बेटी, जीत सदॉ थारै सँग मै ।।
वीर सत्यॉ जद कूद आग मै, राख-राख हो जावैली—
कई नवेली नार सुहागण, वैर्‌या मै पड जावैली !।
कितणा रो सत डिग जावैलो, कितणी लाज लुटावली ।
कितणी धाडा मार-मार यू, अपणो आप मिटावैली ।।
कितणी मार कटारी मरसी, गउआँ सी डकरावैली ।
तड़प-तडप के कई भूख सू, विना मौत मर जावैली !!

नान्हा टाबर बिलख-बिलख, 'माँ-माँ' कह रुल जावैला !
सेलाँ री तीखी नोकाँ पर, कई उछाळ्या जावैला !!
महला सै सिसकार सुणैली, लपटा लाज उठावैली !
माँ-बापाँ री बूढी आँख्या, वार-बार भर आवैली !!
कितणी गर्भवती मातावाँ, माँ कहती शरमावैली !
कितणी बहना भाई कहती, बैरी सू डर जावैली !!
गळी-गळी मै रज-रज भीतर, लाल-लाल लोही पड़सी !
आजादी हिचक्याँ भर रोसी, पग-पग पर ल्हासाँ सडसी !!

पण तू अपणो आप बचायाँ, घाटी घाटी मै फिरिए !
आजादी री लाज राखजे, कदै न बैरी सू घिरिए !!
थारा गीत मरण वेला मै, गूजैला जद घाटी मै !
हार्‌या-थक्या त्रीर गति पाता, म्हे भी सुणस्या माटी मैं !!
कण-कण नै हे गोरी थारी, बाताँ कदै न भूलै ली !
चाहे यो इतिहास भूलजा, जनता कदै न भूलै ली !!
इतणो कह झट एड लगाई, घोडी ठक-ठक चाल पडी !
झिर-मिर झिर-मिर बरसण लागी, धण री आँख्याँ बडी-बड़ी !!

मजदूर किसानाँ रो गीत

आगै आगै चानणो, अंधेरो पाछो भागै रे ।
रात गई झाझर को आयो, धरती-माता जागै रे ।।
जे थे धरती रो प्रण राखो, कदै न वा तो डोलै रे ।
हळ मे जोत जग्याँ, बीजा मे, प्राण पडै, मुख वोलै रे ।।

बादळ गाजै, लोर उठै, आभै मे बिजळी चमकै रे ।
खेत खड्या सरणावै, परवा पवन चलै, मे बरसै रे ।।
मिणती मजूरी करै जिका पर, धरती कदै न दोरी हो ।
हळकी होज्या फूल बरोबर, काया सुख मे सोरी हो ।।

खुल्लैखाळै धन-कुबेर, अब किया करै––साहूकारी ।
चोरबजारी पर जीवणियाँ री देखो है मतहारी ।।
अै कपूत धरती माता रा, नीच बण्या चौडे-धाडै ।
पुण्य कर्‌याँ कद पाप धुपैला, क्यू दुख दे, क्यू मन बाळै ।

या दातारी काम न आसी, नई क्रान्ति सिसकारै है ।
बच्चो-बच्चो जाग रह्यो, अब चोरा नै ललकारै है ।।
घणो अँधेरो गैल न सूझै, मन क्यू गोता खावै रे ।
मन मे हूँस मोकळी है तो, क्यू नी पग सरकावै रे ।।

उमङ्ग

तारॉ री छइयॉ मे सो मत, सुपनो झूठो आव लो !
सुपनै ने जो साचो समझै, वो कुमौत मर जावै लो !!
भेद भरी दुनिया मे मोटा मिनख कुचाल सदा चालै !
मौज अमीरी री पॉती मे, और गरीबी घर घालै !!

गहरी नीद न सोवै जनणी, भार मरै, पौडा आवै !
कद सुख चैन गरीबी पावै, कद धरती मॅगळ गावे !
हठ ना कर, भोळो तू कोनी, देख जमानो खोटो है !
नैणॉ मे सॅकड़ी दुनिया रो, नक्सो कदे न मोटो है !!

चौडी गैल चालसी वो तो, कदै न ठोकर खावै लो !
आडो, टेढो, ऊॅलो-सूलो, चालै वो रुळ जावै लो !!

भू-दान

रात अँधेरी कट के रहसी ।
धन धरती अब बँट के रहसी ।।
भूखी जनता चुप कद रहसी ?
जोर-जुलम अब घट के रहसी ।।

मँहगाई अब मौत बराबर, मरै भूख सूँ नाना टाबर,
चोरा रो दिल कदै न हालै, बात करां तो कठो झालै ।
ताळा कूची भीतर कांई ? जाण्यां प्राणां री परछांई ।।
अै दिन भी अब राम दिखावै, मुरदां रा कुण दाम वणावै ?

देखो हाथ, हाथ नै खावै—
हांसै सेठ, मिनख मर जावै ।
अब न गरीबी डट के रहसी ।
धन-धरती अब बँट के रहसी ।।

मजदूराँ पर गोळी चालै, मिल-मालिक छाती नै सालै,
चोर धान पूरो क्यू तोलै ? रखवाळो भी आज न बोलै !
घर मै रोटी साग न भाजी, चूसा खावै कल्लाबाजी !!
तिरस्या डाँगर जान गँमावे, पाणी नै भी अै तिरसावै !

चुगटी चून मिलै ना चारो–
अब तो मँडग्यो मरणो म्हारो !
आज अँधेरो छँट के रहसी !
धन-धरती अब बँट के रहसी !!

खेत सूखग्या, दाणा बळग्या, भूखाँ रा कागळिया गळग्या।
बादळ आता-आता टळग्या, विपदा मे ठाकुरजी छळग्या।
अब तो हाथाँ मे जेली रे– मौत-क्राति बैठी भेली रे !
लोग चुणै ना सीधो गैलो, वार पडै ना, बळ रो पैलो !

बिना बात कीडी क्यू मारै;
पण मरतो कद तई बिचारै ?
भेद-भाव अब हट के रहसी !
धन-धरती अब बँट के रहसी !!

भू-दान

भूख गरीबी और बिमारी, मिलै गरीबा नै क्यूँ सारी ?
मौटा माणस मौज मनावै— मोटी-मोटी तनखा पावै !
छोटा नै हरदम घुडकावै, कोठ्याँ मे टाटा लगवावै !
पण बाबू जद घर ने आवै, पडै तावडो पग बल जावै !

हाय गरीवी गजब दिखावै,
हाड पाँसळा सैं दुख आवै !
नीद घणी अब कट के रहसी !
धन-धरती अब बँट के रहसी ।।

जुलमी जुलम घणो मत करिये, जनता सूँ डरतो ही रहिये !
जनता जद तक भोळी-ढाळी, तू कूदै है डाळी डाळी ।
पण भोलै नै समझ पडैली, फिर तो थारी नही चलैली,
तू कुमौत ही मर जावैलो, टाबरियाँ नै बिलखावैलो !

क्यू नी अब सूँ चादर ताणै,
वदल्यै जुग री बात पिछाणै !
जुग-जीवण अब सट के रहसी !
धन-धरती अब बँट के रहसी ।।

उमङ्ग

चाहे कितणो जोर लगाले, धन पर कितणी म्हौर लगाले !
ऊँचा-ऊँचा महल चिणाले, मरै जिकाँ नै खूब जिमाले,
लाँबी-लाँबी भीत उठाले, पहरै पर पहरो लगवाले !
चक्कू छुरी तेज करवाले, दारू री बोतल गटकाले–

जुग पलट्यो या बात भुलाले,
चापलूस बण बात बणाले !
पण अै बेडी कटके रहसी !
धन-धरती अब बँट के रहसी !!

धरती रो सिणगार

खड्यो-खड्यो ललकारूँ थानै, सुपनै रा ससार !
देखू म्हारी धरती रो अब, कुण लेवै सिणगार !!

माटी री मीठी सौरभ मे, बीज भीजग्या सारा !
कूपल रै उजळै होठाँ पर, लुक-छिपग्या अँधियारा !!
हेलो मारै आज रूँखडा, छइयाँ भी मुस्कावै,
नई जीवणी री वाणी मे, बिरखा झिर मिर गावै !!

आज उदासी रा बादळ तो, चल्या गया उण पार !
देखू म्हारी धरती रो अब, कुण लेवै सिणगार !!

वढ्यो जमानो आगै-आगै, पाँव पड़ना पाछो !
सिरळ-भिरळ सै हुया सूगला, चिमकै आछो-आछो !!
दीपक थर-थर बुझग्यो, किरणाँ नयो चानणो ल्याई –
धरती री करडी काया पर, करसै ली अँगडाई !!

कान खोल के सुण ल्यो अब तो, धरती री हुङ्कार।
देखू म्हारी धरती रो अब, कुण लेवै सिणगार।।

बाजण लागी पैंजणियाँ, बिजळी अब घूमर घालै !
खेताँ रै गैलै पर हाळी, मदरो-मदरो चालै।।
कदै पिछाडी, कदै अगाडी, डगमग पग सरकावै।
काँधै ऊपर जेळी धरके, तेजो टेर सुणावै।।

बाँह पकड के सागै-सागै, चलै मुळकतो प्यार।
देखू म्हारी धरती रो अब, कुण लेवै सिणगार।।

चाँद और ताराँ सूँ भरियो, मौज करै गिगनार।
किरणाँ लियाँ चाँदणी गावै, गीत दूधिया धार।।
सुगण मनावै, पिया रिझावै, रातडली मैं नार—
साँझ सबेरे भँवरा भिणकै, झीणी सी झकार।।

समझ गया म्हे धरा बतावै, जीवण रो आधार।
देखू म्हारी धरती रो अब, कुण लेवै सिणगार।।
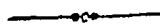
बताओ, अै कूण ?

आँख्याँ री बेच लाज, सैना मे बात करै ।
पेट बळे दुखी देख, लुकछिप के घात करै ।।
माथै पर तिलक छाप, ठगणै री बात बणा ।
सोगन खा 'दूध-पूत,' मुळकै दिन रात घणा ।।
आडी ले धरम-धुजा माणस ने माणस खा ।
हँस-हँस के दाँत दिखा, मरता रो छाणस खा ।।
भूखाँ रै पेट लात, कोठाँ मे धान सिडे ।
सुख री तो गई रात, मरताँ सू मौत लडै ।।

दुखियाँ पर दोष मँढै, सकट री घडी बता !
पोथाँ मे ज्ञान भणै, सस्कृति री कडी जता ।।
दूध मिलै पडा नै, पत्थर नै भोग मिलै ।
मौज मिलै गुडा नै, भूखाँ नै रोग मिलै ।।
चीणी सो मुँह मत कर, चीणी पर गाज पडै ।
कपडो कद लाज ढकै, धरती खुद लाज मरै ।।
साँप कठै लीक पीटै ? बिल नै अब खोद गिरो ।
हाथाँ मे सेल थाम साँपाँ नै रोद गिरो ।।

अपणै मे सिमट आप, यो कुण किरसाण खड्यो ?
बिजली बिन नसाँ मद, धनुष बिना बाण पड्यो ।।
चाल्यो हो बाण कदै, जोबन हो जोर घणो ।
धरती खुद झूमै ही, नाच्यो मन-मोर घणो ।।

जुग-जुग री आँच ताप, देह कदे लुळकै ही ।
सिट्टाँ नै मौर-मौर, नार कदे मुळकै ही ।।
हाड खिर्या, दाँत पड्या, खेत खड्या काँप रह्या ।
लूआँ सूँ, डाँफी सूँ, .बोझा कुण ढाँप रह्या ?

पाँती म्हे माँग रह्या, चोराँ सूँ जोर-जबर ।
स्याणफ अब चलै नही, लेवाँला खूब खबर ।।
मँगतो मजदूर नही, मँगतो किरसाण नही ।
मँगतो हे सेठ बडो, जावैली बाण नही ।।
बै दिन अब बीत चुक्या, सुपनो जजाळ भर्यो ।
आँताँ सूँ पीप काड, दूणो कुण भार कर्यो ?
धरती माँ पूताँ नै, देवै ही धान हर्यो ।
मा खुद अब भूखी है, बी रो भी मान मर्यो ।।

ब्याज चढा, धात करै, मँगताँ नै मात करै ।
परवा अब कूण करै, झूठी सै बात करै ।।
मँगतो "दातार नयो" राखाला काण नही ।
कान पकड दूर कराँ, आवैलो ताण नही ।।
पछलो अब नेम कठै, कूण सेणै, 'टेम' कठै ?
माँ पर हा प्राण लड्या, पण अब वो प्रेम कठै ?
अपणो सै पेट भरै, भारत-माँ भूख मरै ।
अब भी जो मौज करै, क्यूं नीं वो डूब मरै ??

राजस्थानी कविताओं का परिचय

सैनाणी

उदयपुर के राणा राजसिंह के समय में राजस्थान के इतिहास ने यह स्वर्ण पृष्ठ सजाया था। राणा को पडोसी राज्य की राजकुमारी से, बादशाह के क्रूर पजो से बचाने का निमत्रण मिला था। आँधी-वेग के साथ बादशाह असख्य फौजें लिये आ रहा था। उसे रोकने के लिये राणा ने दरबार में बैठे सरदारो को ललकारा, किन्तु जब कोई तैयार नही हुआ, तो नौजवान सरदार चूडावत ने यह कार्य-भार अपने कधो पर लिया। जाने से पूर्व वे अपनी नवविवाहिता पत्नी से मिलना चाहते थे। मिलने की उत्कठा ने उन्हें एकदम से अंतः पुर के द्वार पर ला खड़ा किया।

रानी हाडी के हाथो से 'हथलेवे' का चिन्ह अभी नहीं मिटने पाया था, चुनरी का रग भी किञ्चित् फीका नहीं पडा था। एक मानवीय दुर्बलता ने सरदार को भी अभिभूत कर लिया, किन्तु वीर क्षत्राणी हाडी रानी ने सुहाग रात की उस मधुरिम घडी में भी अपने कर्त्तव्य को नही भुलाया। वे समझ गई, मिलन-विरह के बीच कर्त्तव्य खडा है, अत उन्होंने तुरन्त उत्तेजनात्मक और तीखे व्यग से पति की सोई हुई वीरता को जगाया और युद्ध में जाने के लिये उन्हें कटिबद्ध कर दिया। सरदार दुर्ग से बाहर चले तो गये, किन्तु मन उस अपूर्व सौन्दर्य में उलझा रहा। एक सेवक को उन्होने अत पुर में भेजकर, युद्ध में विजय का प्रतीक एक स्मृति-चिन्ह (सैनाणी) लाने को कहा। रानी एक बार तो ठिठकी किन्तु दूसरे ही क्षण कर्त्तव्य-विमुख पति को अपने कटे शीश की 'सैनाणी' देकर विदा किया।

हिरौल

राजस्थान की सामती संस्कृति में शौर्य और विवेक क अनेक स्वस्थ उदाहरण आज भी स्वाभिमान से हमारा सिर ऊँचा कर देते है, किन्तु अध-शौर्य और आपसी वैमनस्य तथा झूठे गौरव को सभालने की महत्वाकाक्षा ने अनेक राजपूतो के अनचाहे वलिदान भी लिये है। "हिरौल" में ऐसा ही कथानक है।

अंताला किला वर्षो से पराधीन था। राणा ने शक्तावतो और चूडावतो में प्रतियोगिता की भावना पैदा कर, दो में से किसी एक दल को सेना के अग्र-भाग में रहने का उच्च-सम्मान देना चाहा। हिरौल (हरावल) प्राप्ति के लिये परीक्षण प्रारभ हुआ।

"दुर्ग में जो भी दल सर्वप्रथम प्रवेश करेगा, वही उस सम्मान का अधिकारी होगा।" शक्तावत वल्ल जी और सालूम्बर के चूडावत सरदार, दोनो ही एक साथ आगे बढ़े। शक्तावत वल्ल जी दुर्ग के मुख्य द्वार पर जा डटे और चूड़ावत सरदार ने दुर्ग के परकोटे के दूसरी ओर से सीढ़ियाँ लगाकर भीतर जाने का प्रयत्न किया। घमासान लड़ाई में दोनो ही दल प्राण-पण से आगे बढ़ रहे थे। वल्ल जी का हाथी दुर्ग के मुख्य द्वार पर लगे हुए भाले सदृश लबी नोकदार कीलो से टक्कर नही ले रहा था और इधर चूडावत सरदार किसी तरह दुर्ग के सर्वोच्चशिखर पर चढ चुके थे। वल्ल जी ने भी और कोई चारा न देखकर, स्वय बलिदान होने की ठान ली। उन्होने आदेश दिया कि हाथी के मस्तक पर उन्हें बाँध दिया जाय और फिर दुर्ग-कपाट पर टक्कर लगाई जाए। सरदार के सुदृढ आदेश को टालने की किसी में हिम्मत नही हुई और उन्हें हाथी के मस्तक पर बाँध दिया गया। हाथी चिघाड़ता हुआ आगे बढ़ा और गभीर गर्जन के साथ दरवाजा टूट गया! इधर चूडावत सरदार का शीश भी एक क्षण पहले कटकर दुर्ग में जा पड़ा था। रक्त में लथ-पथ वल्लजी का शरीर छलनी होकर वहीं तीक्ष्ण कीलो में टगा रह गया। संयोग से चूड़ावतो की विजय हुई।

आण री बात

'आण री बात' मे राजस्थान के गौरव, राणा प्रताप के जीवन की झाकी है। भयानक जगल में भटकते-भटकते राणा की पत्नी और उनकी सतान को पीडाओ ने, उस वीर-हृदय को दुर्बलताओ से घेर लिया। नन्ही सी बच्ची के हाथो से जब वन-विलाव रोटी छीन कर भाग गया, तो राणा के लिये यह असह्य हो उठा। उन्होने अपनी 'आण की वात' को भुलाकर अकवर को सधिपत्र भेज दिया। बीकानेर के कवि-राजा पृथ्वीराज वही अकबर के दरबार में थे। उन्होने वादशाह की प्रसन्नता में थोडा व्यवधान उत्पन्न कर दिया और कहा कि यह पत्र राणा के हाथ का नही है। अकबर ने निश्चय करने के लिये, पृथ्वीराज को ही नियुक्त किया। फिर क्या था, कवि की वाणी ने एक बार फिर देश की आन रख ली। उन्होने कविता में ही स्वाभिमान और देश-प्रेम से भरा एक पत्र राणा को लिखा। पत्र ने राणा को जैसे सोते से जगा दिया। इसके बाद, पत्र के उत्तर में राणा ने जो कुछ लिखा-वह तो इतिहास-प्रसिद्ध है।

कोडमदे

सुजानगढ और लाडनूं के बीच (काला डूगर) गोपालपुरा किसी जमाने में राजकुमारी कोडमदे के पिता सरदार माणकदे के अधिकार में था। कोडमदे के विवाह की वात जोधपुर के राव अरड़कमल से पक्की हुई थी किन्तु लड़की ने जैसलमेर के सरदार शार्दूल को ही अपना वर चुना। विदाई से पूर्व माणकदे ने शार्दूल को वीरता और विवेक के सम्बन्ध की बात वताकर अरडकमल से सचेत रहने के लिये कहा, किन्तु शार्दूल अकेला ही कुछ साथियो को लेकर विदा हुआ। मार्ग में, जैसी आशका थी, अरडकमल ने आक्रमण करके शार्दूल को धराशायी किया।

वीर रमणी कोडमदे लोकलाज छोडकर पालकी से बाहर आगई और शत्रु से युद्ध करने लगी। बाद मे सूर्योदय होने से पूर्व उसने अग्नि-प्रवेश करने का निश्चय किया। उस समय उसने अपने दोनो हाथो को काटकर पिता और सास के पास भेज दिया और कहा—"पिता ने एक अन-जान व्यक्ति के हाथो में हाथ देते हुए कहा था—'बेटी! इस हाथ की लाज

रखना।' मैंने उसी हाथ की लाज रक्खी है और प्राण रहते हुए अपने आप को दुश्मन के हाथो नहीं पड़ने दिया है। इधर मेरी प्रात स्मरणीया सास भी तो मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी? मेरा दुर्भाग्य है कि मैं अपने हाथो से उनका चरण-स्पर्श कर आशीष नही ले सकूगी। माँ से कहना, मेरा प्रणाम-वाहक यह हाथ ही है; अतः इसे ही स्वीकार करें।''

यद्यपि भावावेश के आधिक्य के कारण वीर रमणी कोडमदे की यह कथा अधिक स्वस्थ और सतुलित नही है, फिर भी इसमें एक अजीब स्वाभाविकता है। शृगार, वीर और करुण तीनो रसो में एक अपूर्व शास्त्रीय सदोष-निष्कलुषता है। केवल काव्य-कौशल ही नही, अन्य सरलताओ के कारण भी मुझे यह कविता 'सैनाणी' से भी अधिक पसद है।

कविता का आरंभ विदाई के लोक-गीत 'लश्कर थामो जी ढोला' के आधार को लेकर बडी तीव्रता के साथ आगे बढा है।

धरती री लाज

मध्य-भारत में रानी दुर्गावती के अमर बलिदान की कहानी, आज भी मुर्दा दिलो में प्राण फूक देती है। राजा दलपत के देहात के पश्चात्, वैधव्य की प्रशात ज्वाला में जलते हुए भी, वीर दुर्गावती ने अपने नाबालिग पुत्र के बालिग होने तक शासन-भार को सुचारु रूप से चलाने का दृढ निश्चय कर लिया।

अकबर ने रानी की दुर्बल और असहाय स्थिति से लाभ उठाने के लिये, रानी के साथ युद्ध करने की घोषणा की। वीर रानी ने शत्रु का सामना किया और शाही सेना के अनेक बार दाँत खट्टे किये, किन्तु असख्य सेना के नायक आसफखा ने रानी का पीछा नहीं छोडा। निदान, रानी को अतिम युद्ध-यात्रा प्रारम्भ हुई।

रानी के वीर पुत्र नारायण ने भी, इस बार युद्ध में जाने के लिये माँ से आज्ञा चाही। रानी ने सहर्ष पुत्र को विदा किया और स्वंय भी हाथी पर चढ़कर शत्रुओ को अपनी अपूर्व वीरता से हतप्रभ करने लगी। भारत की एकदु भाग्यपूर्ण परंपरा यह भी रही है कि यहाँ घर के भेदियो

ने ठीक समय पर अपने ही घर में आग लगाकर शत्रुओ को विजयी होने का अवसर दिया है । रानी के साथ भी ऐसा ही विश्वासघात हुआ । इधर वीर नारायण के मृत्यु-समाचार ने भी रानी की हिम्मत तोड दी । फिर भी युद्ध में विराम नहीं आया । साँझ होते-होते रानी का शरीर तीक्ष्ण तीरो से स्थान-स्थान पर घायल हो गया और अत में अचानक एक तीर आकर उनकी आँख में घुस गया । रानी ने अतिम घडी पहचान ली और अपने पवित्र शरीर की रक्षा का कोई उपाय न देखकर, हाथी के महावत से अकुश लिया और उसे अपने सीने में मार लिया । इसके बाद रानी का जैसा करुण अत हुआ—वह केवल कविता में ही पठनीय है ।

लोरी

'लोरी' में एक गरीब क्लार्क की पत्नी की आत्म-कथा है । भूख से पीडित माँ ने अपने को नन्हे बालक को दूध पिलाने में असमर्थ पाया तो उसे जबर्दस्ती सुलाने के लिये 'लोरी' देनी शुरू की और उसी लोरी को सुनता-सुनता वह हमेशा के लिये गहरी नीद सो गया । आज के युग में क्रूर अधिकारियो के सीने में यह कहानी शायद कुछ करुणा पैदा कर सके ।

धरती री पहली बेटी

'धरती री पहली बेटी' में सामंत युग की एक भुलाई हुई कहानी को नया दृष्टिकोण दिया गया है । मेवाड के भीलो ने राणाओ के साथ स्वतन्त्रता का युद्ध प्रारभ किया था किन्तु इतिहास में भीलो के शौर्य का बहुत थोडा वर्णन है । मातृभूमि की रक्षा के लिये वीर भील भी अपनी वीर पत्नी से विदा होते समय उतना ही करुण हो उठता था । इसके अतिरिक्त वीर भील-बालाएँ भी देश की आन-रक्षा के लिये जौहर की ज्वाला में भस्म होने वाली सतियो से किसी तरह पीछे नही थी । वीर क्षत्राणिये ने प्राण देकर जहाँ अपने सतीत्व की रक्षा की वहाँ वीर भील बालाए सामाजिक बंधनो के फलस्वरूप, सती होने के अधिकार से वचित रहकर

भी, जीवित रहते अपनी मर्यादा को और देश-रक्षा की परपरा को और भी स्वस्थ और सुरम्य बनाती थी। हमेशा के लिये मर जाने वाली क्षत्राणियो की अपेक्षा जीवन सघर्षो से जूझते हुए ये नि.सर्ग बालाएँ इतिहास के लिये अधिक गौरवास्पद होती, यह बात शायद इतिहास स्वय ही भूल गया। इस कविता में युद्ध-यात्रा के समय वीर भील अपनी पत्नी से विदा होरहा है। विदाई की इस करुण वेला में पति-पत्नी की वार्ता में जो स्वातंत्र्य-रक्षा और प्रेम की दिव्य भावना आई है, वह अधिक ध्यान देने योग्य है।

मज़दूर किसाना रो गीत (झॉझरको)

देश में कुछ कर गुजरने की एक नई उमंग उठ रही है। अधकार भाग रहा है, और प्रातःकाल मे नई आशा की किरणें फूट रही है।

भू-दान

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है; किन्तु यह 'भूदान कुछ अधिक तीखा बन पड़ा है।

धरती रो सिणगार

इस कविता मे राजस्थान की प्रकृति और प्रगतिशील परपराओ के प्रति आशा-भरा सगीत है।

बताओ ऐ कूण

इस कविता का परिचय देना व्यर्थ है। देश के दुर्भाग्य से ऐसे व्यक्ति जहाँ-तहाँ बहुत ऊँचे आकर ठस गये हैं।